# धर्मवीर भारती

का

# उपन्यास साहित्य

कैलाश जोशी
प्रवक्ता-हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय,
प्रतापगढ़ (राजस्थान)

चिन्मय प्रकाशन

प्रकाशक

चिन्मय प्रकाशन

चौडारास्ता,

जयपुर–3

☆

सन् १९७३–७४

☆

मूल्य

१० रुपये

☆

मुद्रक :

दी यूनाइटेड प्रिंटर्स

राधा दामोदर की गली,

चौडा रास्ता, जयपुर–३

# प्राक्कथन

श्री कैलाश जोशी ने इस पुस्तक मे आधुनिक हिन्दी उपन्यासकार धर्मवीर भारती के उपयासो का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। उपन्यास-कला के अधुनातन मान-दडो और मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक परिवेश के परिप्रेक्ष्य मे श्री जोशी ने अपने इस अध्ययन मे भारती के उपन्यासो का मौलिक विवेचन उपस्थित किया है। धर्मवीर भारती के उपन्यास-साहित्य पर इसके पूर्व इतने विस्तार से सभवत हिन्दी मे पहले नही लिखा गया है। श्री जोशी ने एक अछूते विषय पर अपनी मौलिक दृष्टि से विवेचन प्रस्तुत कर प्रशसनीय कार्य किया है। मुझे विश्वास है कि इस कृति का हिन्दी के ज्ञाता सुधीजन यथोचित स्वागत एवं मूल्याकन करेंगे।

**प्रकाश आतुर**
व्याख्याता हिन्दी विभाग,
उदयपुर विश्वविद्यालय,
उदयपुर

# लेखक की ओर से

धर्मवीर भारती हिन्दी जगत के जाने-माने कथाकार हैं। अभी उन्होने अपनी लेखनी को विराम नही दिया है, अत अन्तिम रूप से उनके कृतित्व पर कुछ कह पाना सभव नही है। वस्तुतः समकालीन और जीवित लेखक के सम्बन्ध मे कुछ लिखना इसलिए कठिन होता है कि उसकी भाव या विचार-धारा अनागत भविष्य मे ऐसे मोड भी ले लेती है जिनकी पूर्व-कल्पना तक सभव नही होती। पर इसका यह आशय नही कि कवियो या लेखको के जीवन-काल मे उनके कृतित्व का अध्ययन एव मूल्याकन किया ही नही जाय। लेखक जो कुछ लिख लेता है उसे फिर अ-लिखा तो किया ही नही जा सकता। अत. उसके द्वारा रचित-सर्जित साहित्य का मूल्याकन किसी भी प्रकार अनपेक्षित नही माना जा सकता। यदि आगे चलकर उसके कृतित्व मे विकास की कुछ नवीन दिशाओ का उद्घाटन होता है तो उसके समग्र कृतित्व का पुनर्मूल्याकन भी किया जा सकता है। अत जब मैंने अपने अध्ययन-अन्वेषण के लिए धर्मवीर के उपन्यासो को चुना तो मेरे मन मे किसी प्रकार की दुविधा या सकोच का भाव नही था।

भारती के साहित्य का मैं नियम्ति पाठक रहा हूँ विशेषकर कथा साहित्य का। चाहता तो उनकी कहानियो के अध्ययन को भी प्रस्तुत पुस्तक मे समाविष्ट कर सकता था पर उसके अनावश्यक विस्तार और कलेवर-वृद्धि की आशका ने मुझे ऐसा करने से रोक दिया और मैंने उनके उपन्यास-साहित्य तक ही अपने को सीमित रखा। यह सत्य है कि भारती के उपन्यासो को लेकर हिन्दी मे अभी बहुत कम लिखा गया है। इस दृष्टि से मेरे अध्ययन का विषय नितान्त मौलिक और अछूता रहा है। इसके अतिरिक्त आलोचना की पिटी-पिटाई और परम्परायुक्त पगडण्डियो से हट कर यहा नव-विकसित आलोचना-पद्धति पर भारती के उपन्यासो का विवेचन उपस्थित किया गया है।

प्रथम अध्याय मे धर्मवीर भारती के व्यक्तित्व एव साहित्य का परिचय उपस्थित किया गया है। द्वितीय अध्याय मे प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास की विकास-यात्रा का सक्षिप्त कथन करते हुए उपन्यास क्षेत्र के उन प्रयोगो पर पूर्ण प्रकाश डाला गया है जो अधुनातन कृतियो मे परिलक्षित होते हैं। तृतीय अध्याय मे भारती के दोनो

उपन्यासो 'गुनाहो का देवता' एव 'सूरज का सातवां घोडा' का हर दृष्टि से विस्तृत परिचय दिया गया है तथा 'ग्यारह सपनो का देश' ( जिसमे भारती के अतिरिक्त नौ अन्य लेखनियो का योगदान है) का भी सक्षिप्त परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय मे भारती के दोनो उपन्यासो पर गभीर आलोचनात्मक दृष्टि डालते हुए पात्र-सृष्टि, प्रेम और सेक्स, आदर्श और यथार्थ, भाषा और शिल्प, समस्या-आकलन, विचार-तत्त्व, स्वच्छन्दतावाद और मनोवैज्ञानिकता की दृष्टि से विचार करते हुए निष्कर्ष प्रतिष्ठित किये गये है। अभी तक हिन्दी मे भारती के उपन्यासो का इतना विशद एव व्यापक विवेचन नही हुआ है। विद्वज्जन ही निर्णय कर सकेंगे कि यहा स्थापित नवीन तथ्य कहा तक युक्तियुक्त है। पचम तथा अन्तिम अध्याय मे भारती के उपन्यास-साहित्य का एक मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है और हिन्दी के आधुनिक उपन्यासो मे उनका महत्व एव स्थान निर्धारित करने की चेष्टा भी की गई है।

आदरणीय प्रो० प्रकाश आतुर का श्रद्धापूर्ण अभिवदन करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिन्होने समय समय पर विद्वत्तापूर्ण निर्देश देकर पुस्तक को यह रूप देने मे मेरी सहायता की है।

कैलाश जोशी

## अनुक्रम

अध्याय—१

धर्मवीर भारती एक परिचय — १

अध्याय—२

प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास कथाशिल्प एव नवीन दिशा — ४

अध्याय—३

भारती के उपन्यासो का संक्षिप्त परिचय — १४
—गुनाहो का देवता
—सूरज का सातवा घोडा
—ग्यारह सपनो का देश (सयुक्त लेखन)

अध्याय—४

भारती के उपन्यासो का आलोचनात्मक अध्ययन — २८
—प्रमुख पात्र
—आदर्श एवं यथार्थ
—भाषा एवं शिल्प
—मनोविज्ञान
—समस्याओ का आकलन
—विचार तत्व
—स्वच्छन्दतावाद का आग्रह
—प्रेम और यौन भावना

अध्याय—५

भारती के उपन्यास : एक मूल्यांकन — ७७

परिशिष्ट—

(i) भारती के उपन्यासों मे स्वप्न-मनोविज्ञान — ८२
(ii) राधा का स्वरूप : रंग धमवीर भारतो के — ९२
(iii) सदभ-ग्रन्थ — १००

ग्रौर चाहे स्वय सबको मुक्ति देना वह न जाने किन्तु जिनको माजता है उन्हे यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखे। 'शेखर' ने अपने अनुभव से जाना है कि ग्रहता, भय ग्रौर सैक्स ये तीन महती प्रेरणाएँ हैं जो मानव के जीवन को परिचालित करती हैं। मानव इन्हे पैतृक रूप से जन्म के साथ ही पाता है, बाद की परिस्थिति या व्यवहार से नही। इन मूलभूत प्रश्नो को 'शेखर' अपने जीवन की घटनाग्रो से प्रत्यक्ष करता है ग्रौर इन प्रश्नो से सवद्ध प्रश्न ग्रौर उपकरण उसकी सत्यान्वेषी दृष्टि ग्रौर प्रवुद्ध सवेदना को झकझोरते हुए गुजरते चलते हैं, यह जीवन चलता रहता है। ईश्वर मनुष्य के स्वतन्त्र चिन्तन ग्रौर विकास के लिए वहुत वडा प्रश्न वना हुग्रा है। मनुष्य परम्परा से ईश्वर के ग्रस्तित्व को ओढता ग्राया है। 'शेखर' को वचपन से ही इस कही न दिखने वाली हर जगह टाग ग्रडाने वाली सत्ता के प्रति सदेह है। वह वार-वार उसका ग्रस्तित्व देखना चाहता है परन्तु वह ग्रनुभव से सीखता है कि सारे कार्य ईश्वर के बिना होते चल रहे हैं ग्रौर झूठमूठ मे यह कल्पित शक्ति हमे ग्रातकित किये है। 'शेखर' जीने की प्रक्रिया मे तमाम प्रश्नो से जूझता है। उन प्रश्नो का उत्तर वह फार्मूले से नही, अपने ग्रनुभवो ग्रौर ग्रन्वेषो से पाना चाहता है, इसीलिए वह फार्मूलेवादी लोगो के साथ खप नही पाता।

'ग्रज्ञेय' ही का एक ग्रौर उपन्यास ग्रपना अलग व्यक्तित्व लेकर प्रकट हुग्रा—'नदी के द्वीप' जिसका ग्रसपृक्त क्षण जीवन का छोटा सा खण्ड रूप था।

वास्तव मे 'ग्रज्ञेय' का यह नवीन प्रयोग एक टेकनीक का प्रयोग था जिसमे उन्हें ग्राशातीत सफलता प्राप्त हुई। इस उपन्यास का एकाग्र चिन्तन सामाजिक सघर्ष से विल्कुल दूर था ग्रौर उसने शरण ले ली थी कि एक निर्लिप्त जीवनेच्छुक साधक की भाति यमुना की कछारो मे, कुदसिया वाग मे, सात ताल के तट पर कश्मीर की नीरवता मे। 'ग्रज्ञेय' का ही एक ग्रन्य उपन्यास 'अपने अपने 'ग्रजनबी' मृत्यु की कल्पना पर लिखा गया सुन्दर उपन्यास है।

इसके वाद रेणु' का उपन्यास 'परती परिकथा' सामने ग्राया। यह एक ग्राचलिक उपन्यास था। 'परती परिकथा' वध्या धरती के परिप्रेक्ष्य मे कुछ पात्रो के जीवन-चरित्रो का एलवम हो सकता है पर उसके चित्र इतने यथार्थ रूप से उभरे हुए सुर्ख हैं कि उसके समक्ष 'बूद ग्रौर समुद्र' के पात्र सकुचित हृदय के मध्यम चरित्र वन कर रह जाते हैं। 'परती परिकथा' एक स्वतन्त्र ग्रौर मौलिक उपन्यास है जो स्वय समीक्षात्मक मानदण्डो ग्रौर ग्रौपन्यासिक तत्त्वो मे एक नवीन परिवर्तन लाता है।

द्विवेदी द्वारा रचित 'वाणभट्ट की ग्रात्मकथा' भी इसी प्रसग की एक रचना है। 'वाणभट्ट की ग्रात्मकथा' इस कारण असाधारण रचना है कि उसमे साधारण तत्त्व होते हुए भी ग्रसाधारण कुछ भी नही है।

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास हमारे सामने अन्तश्चेतनावादी यथार्थ का प्रस्तुत करते हैं। वर्जनाओ का जितना सुन्दर और मार्मिक चित्रण इलाचन्द्र जोशी के पात्र प्रस्तुत करते हैं उतना हिन्दी के अन्य उपन्यासो के नही। इनके पात्र फ्रायड की कोटी के चिन्तक हैं, इनके पाचो उपन्यासो के नायक वासनाओ के शिकार बनकर समाज के भीतर क्षोभ भर देते है। 'सन्यासी' का नदकिशोर, 'पर्दे की रानी' का महीप, 'लज्जा' के लज्जा और रज्जू सभी दमित वासनाओं की ओजमयी प्रेरणा लेकर जीवन मे अशान्त भटकते हैं और इनके माध्यम से समाज पर पड़ा सफेदी का आवरण अपने आप हटकर छिन्न-भिन्न हो जाता है।

इसके उपरान्त हमे कुछ विशिष्ट प्रयोग भी देखने को मिलते हैं। 'ग्यारह सपनो का देश' दस लेखको द्वारा रचित समन्वित उपन्यास है जो सचमुच सपना बन कर रह गया है, उपन्यास नही बन पाया है। इसी प्रसग मे समन्वित रूप से लिखा गया एक अन्य उपन्यास 'एक इ च मुस्कान' जो राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी का सयुक्त लेखन है, सफल कहा जा सकता है।

इसके बाद एक विशिष्ट उपन्यास हमारे सामने आता है धर्मवीर भारती का 'सूरज का सातवा घोडा'। टेकनीक की दृष्टि से इसे विशिष्ट उपन्यास माना जा सकता है। इसमे 'माणिक' प्रेम के लिए प्रेम नही करते। वे प्रेम के माध्यम से स्वय को पहचानते हैं। 'माणिक' ने तीन लडकियो से प्रेम किया है और वे प्रेम के माध्यम से इन्हे पहचानने की कोशिश करते हैं। 'माणिक' जीवन के बिखराव मे से कुछ ऐसी समस्याए चुनते हैं जिनसे हमारी वास्तविक स्थिति का भान होता है। 'माणिक' के इस प्रेम मे वास्तविकता का दर्द है—प्रेम, यह एक शब्द पूरे समाज की नग्नता को मूर्त्त करने मे समर्थ है। यहा आकर प्रेम अपनी पारिभाषिक स्थितियो को छोडकर अपना रूप स्वय गढता है और पारम्परिक विचारधाराओ और मान्यताओ को चुनौती देता है। उपन्यास की दृष्टि आज के परिवेश की है जिसमे प्रेम जी रहा है और प्रेम का यथार्थ जी रहा है।

'चादनी के खण्डहर' गिरधर गोपाल की कृति है। यह भी एक नूतन शिल्प-प्रयोग है। इसमे लेखक ने 'वसन्त कुमार' के परिवार के मात्र चौबीस घटो का चित्रण कर समय-सम्बन्धी नया प्रयोग किया है।

इस प्रकार प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास आज के परिवेश मे जी रहा है जहा यान्त्रिकता है, घुटन और सत्रास है, स्व-दृष्टि है। आज के उपन्यास को परिभाषा के सक्षिप्त सूत्र मे बाध पाना सभव नही है और न उचित ही। आज के उपन्यास वर्त्तमान मानव के बिखराव, जटिलता, अस्पष्टता, आस्थाहीनता की तस्वीर सामने रखते हैं। हा, एक सन्तोष हमे जरूर होना चाहिये कि चाहे इन उपन्यासो का स्वर निर्माण

# I धर्मवीर भारती : एक परिचय

धर्मवीर भारती हिन्दी-जगत के [illegible] लेखक हैं। [illegible]
उपन्यासों के क्षेत्र में है उतनी ही कहानियों के क्षेत्र में [illegible]
कविताओं के क्षेत्र में है। [illegible]
पच्चीस कहानियाँ, एक दो समीक्षा की पुस्तकें और [illegible]
की परम्परा में भी भारती का 'अन्धायुग' [illegible] है। [illegible]
अब तक की प्रकाशित कृतियाँ ये हैं :

१. मुर्दों का गाँव
२. आस्कर वाइल्ड की कहानियाँ
३. गुनाहों का देवता
४. प्रगतिवाद : एक समीक्षा
५. सूरज का सातवाँ घोड़ा
६. ठंडा लोहा
७. नदी प्यासी थी
८. चांद और टूटे हुए लोग
९. अन्धायुग
१०. सिद्ध साहित्य
११. ग्यारह सपनों का देश-(संयुक्त लेखन)
१२ सात गीत वर्ष
१३. देशान्तर-(अनूदित)
१४. ठेले पर हिमालय
१५. कनुप्रिया
१६. बन्द गली का आखिरी मकान
१७. पश्यन्ती
१८. कहनी-अनकहनी

सभी कृतियों पर पर्याप्त चर्चा हो चुकी है। भारती [illegible] प्रकृति के व्यक्ति हैं। वे लेखन को व्यापार की दृष्टि से नहीं लेते। इसी का परिणाम है कि

भारती ने बहुत कम लिखा है और अच्छा लिखा है। वैसे भारती ने सृजन के हर आयाम को छुआ है और मात्र छुआ ही नही, सफलता से छुआ है। भारती सृजन की प्रक्रिया को शायद चिन्तन से जुडा मानते हैं, क्योकि उनके प्रतीक घोर चिन्तन के द्योतक है। वैसे चिन्तन, सृजन से पृथक् किया भी नही जा सकता। भारती सभवतः अपनी कृतियो मे सृजक, चिन्तक, आलोचक और पाठक के सभी आयामो से गुजरते हैं। इसी का परिणाम है कि उनकी कृतियो मे सब तत्त्वो का सन्तुलन है। विघटन और बिखराव कही भी नही है।

कथाकार के रूप मे भारती की विशिष्ट ख्याति है, इनके दोनो उपन्यास पर्याप्त चर्चा के विषय रहे हैं। 'सूरज का सातवा घोडा' ने हिन्दी उपन्यास-जगत मे अपना विशिष्ट स्थान बना रखा है। पहला उपन्यास कथ्य की दृष्टि से सफल है, दूसरा शिल्प की दृष्टि से जानदार है। कथाकार के रूप मे भारती बहुचर्चित व्यक्ति हैं। भारती की कहानिया भी किसी से कम नही हैं। इनके कहानी-सग्रह 'चाद और टूटे हुए लोग' तथा 'बन्द गली का आखिरी मकान' से हिन्दी का पाठक अपरिचित नही हैं। भारती की कहानिया और भी कभी-कभार पत्र-पत्रिकाओ मे पढने को मिल ही जाती हैं। कहानी के क्षेत्र मे भारती की तीन कहानियो की 'गुलकी बन्नो,' 'सावित्री नम्बर दो' और 'बद गली का आखिरी मकान' की काफी चर्चा-परिचर्चा रही है और ये अपने समय की आवाज मे बहुत ऊची रही हैं।

कविता के क्षेत्र मे भारती अपने विचारक का बाना छोड शुद्ध अनुभूति के क्षेत्र मे आ खडे होते है। सदेह यह होने लगता है कि भारती को 'भावात्मक लगाव' का कोई रोग है। 'कनुप्रिया' भारती की शुद्ध भावपरक कृति है जहा पाठक कनु और कनुप्रिया की भावनाओ के साथ अपनी भावनाओ के रिश्ते कायम करता है। शायद इसीलिए भारती ने कहा है : "कनुप्रिया की सारी प्रतिक्रियाए तन्मयता की विभिन्न स्थितिया हैं।"[1] सात गीत वर्ष भी भारती के हल्के फुल्के और प्रणय के रुपहले मन-पछी की उडान है। भारती का मन-पाखी जब-जब पख खोलकर प्रणय के आसमान मे उडा है तो वह आसमान की गहराई मे ही खोकर रह गया है। भारती को अपने क्षण प्रणय मे नापकर, फूलो से तौलकर फेंक देने मे एक विलक्षण आनद की अनुभूति होती है। 'अन्धायुग' जैसे प्रयोगो मे भी भारती का मन बेहद रमा है और 'देशान्तर' जैसी अनूदित कविताओ मे भी भारती को सृजन-सुख मिला है। भारती का कवि-रूप बहुत ही कोमल और पारे जैसा चचल है जिसमे चचलता भी है और चमकीलापन भी।

---

१. कनुप्रिया, प्रथम सस्करण, पृष्ठ ७

भारती कवि के रूप मे जितने चचल है, विचारक के रूप मे उतने ही गभीर है। 'प्रगतिवाद एक समीक्षा,' उनका शोध-ग्रन्थ 'सिद्ध-साहित्य' और उनकी एक अन्य कृति 'ठेले पर हिमालय' मे भारती का विचारक रूप उभर कर सामने आया है। भारती साहित्य की जिन्दगी को कृत्रिम मानते हैं। भारती मानते हैं कि साहित्य की जिन्दगी मे जिये जाने वाले क्षणो की हत्या हो जाती है। इसीलिए भारती कहते हैं कि : 'हम वास्तविकता जानते नही, उन्ही कहानियो को हकीकत समझते है लेकिन धीरे-धीरे वह 'कुछ' खो जाता है, तव हम जानते है कि अरे यह तो कहानी है ''[1]

भारती तन से कमजोर, स्वभाव से रोमेन्टिक मानव हैं। शायद फूलो के भी शौकीन हैं इसीलिए हसमुख स्वभाव के हैं। मन से गहरे भी है और बातो मे चालबाज भी। झूठ को सही बना देना, सही को और अधिक सही मे बदल देना .. इत्यादि मे निपुण है। इस सब से अलग रूप भी है भारती के पास साधक का, जहा घोर चिन्तन है, मौन है, फैली हुई कुआरी जमीन की क्यारिया है, धरती की सोधी गन्ध है, मेहनत से उपजाये पुष्पो की सुगन्ध है जो भारती के तन, मन और आत्मा मे महक रही है, नीरव रात्रि मे रजनीगन्धा-सी, चादनी रात मे उडती सफेद रेशमी साडी-सी, और दूधिया फूलो के झरनो मे नहाती हुई सोन-मछलिया-सी।

अभी फिलहाल भारती एक सम्पादक की जिन्दगी व्यतीत कर रहे है। विगत एक दशक से वे 'धर्मयुग' जैसे स्थापित साप्ताहिक एव व्यावसायिक पत्र का सम्पादन कर रहे हैं। सम्पादन के क्षेत्र मे भी भारती ने नये आयामो का सस्पर्श किया है और 'धर्मयुग' के माध्यम से हिन्दी की श्रेष्ठ पत्रकारिता का आदर्श प्रस्तुत किया है। व्यावमायिक दृष्टि होते हुए भी पत्र का स्तर नये मानदण्ड स्थापित कर सकता है, भारती ने अपनी सपादन-कला द्वारा यह सिद्ध कर दिया है। हिन्दी मे 'धर्मयुग' के पाठको की सख्या सर्वाधिक है और दिन प्रतिदिन इसका स्तर नये क्षितिजो तक विस्तार पाता जा रहा है। इस व्यस्तता के बीच भी धर्मवीर भारती का सृजनकार अपने परिवेश के प्रति सजग रह कर सृजनरत है और सामयिक सदर्भों एव युगीन समस्याओ को बदलते जीवन मूल्यो के परिप्रेक्ष्य मे देख रहा हैं। भारती हिन्दी के उन गिने चुने साहित्यकारो मे से हैं जा जिदगी को मात्र महफिली अन्दाज मे न देखकर उसके प्रति 'कमिटेड' अनुभव कर रहे हैं और युग-बोध और समकालीन परिवेश को अपने सृजन के माध्यम से रूपायित कर रहे है।

●

---

१. ठेले पर हिमालय, प्रथम स०, पृष्ठ ५०

# 2 प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास : कथाशिल्प एवं नवीन दिशा

कविता यथार्थवाद की उपेक्षा कर सकती है, सगीत यथार्थ को छोडकर भी जी सकता है पर उपन्यास और कहानी के लिए यथार्थ प्राण है। आधुनिक जीवन बहुत जटिल है, यह जटिलता व्यक्ति के भीतर भी है और व्यक्ति के सम्बन्धो मे भी। अत. यथार्थ का आग्रह करने वाला उपन्यास जीवन को उमी रूप मे लेता है जिस रूप मे वह जीने वाले को अनुभूत होता है। इस उद्देश्य के लिये उपन्यास मनोविज्ञान की खोजो और उपलब्धियो से बहुत प्रभावित हुआ है। वह व्यक्ति के भीतरी जीवन की ओर अधिकाधिक उन्मुख हुआ है। वह व्यक्ति के बाहरी कार्य-व्यापारो आदि के प्रवाह मे बहने के स्थान पर उसके मन की आन्तरिक स्थितियों के विवेचन मे प्रवृत्त हुआ है। सक्रिय जीवन, मात्र जीवन नही है, बहुत महत्त्वपूर्ण जीवन भी है। वास्तविक जीवन तो विचारो, अनुभूतियो का आन्तरिक जीवन ही है।

जैसे बाह्य जगत मे घटनाएँ घटती हैं उसी प्रकार मनोजगत मे भी घटती हैं और चू कि घटती हैं अत उनका महत्त्व है। यद्यपि लेखक बिना किसी शृ खला के जीवन मे घटित होने वाली सारी घटनाओ और प्रभावो को चित्रित करता चलता है फिर भी उसके पीछे सर्जन-न्याय तो होता ही है और वह सर्जन-न्याय यही है कि वह उन घटनाओ और प्रभावो को लेता है जो नायक के चरित्र का कोई मनोवैज्ञानिक सत्य उद्घाटित करने मे समर्थ होते हैं या उसके उद्घाटित मन सत्य का विकास करने मे सक्षम होते हैं। उपन्यासकार को यह बोध तो होता ही है कि वह उपन्यास लिख रहा है, जीवनी नही। प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासो मे हम जीवन जीते हैं, जीवन की कहानी नही सुनते क्योकि यहा से उपन्यासो की आन्तरिक जीवन-यात्रा प्रारम्भ होती है। इसलिये इनमे अनिवार्य भाव से बिम्बो और प्रतीको की योजना होती है। राजकमल का 'मछली मरी हुई' इसका एक सशक्त उदाहरण माना जा सकता है। अन्तश्चेतना का सत्य इतना असम्बद्ध, निरन्तर परिवर्तनशील तथा अनेक क्षणो और व्यक्तियो का अनियोजित पु ज होता है कि उसे कहा नही जा सकता। उन उपन्यासो मे समय-क्रम नही मिलता वरन् ऐसे बोधो की बेमेल श्रेणी प्राप्त होती है जो आगे पीछे के पृष्ठो

मे कही गई बातो के सदर्भ से न जुड कर अपने अपने गहन क्षणो मे स्थिर रहती हैं, किन्तु उन्हे पूरा पढने के बाद एक काव्यात्मक सश्लिष्टता प्राप्त होती है।

उपन्यास के क्षेत्र मे 'चित्रलेखा' एक आकस्मिक दैवी घटना घटी, क्योकि वास्तविक रूप से यह उस लेखक की रचना नही थी जिसने 'अपने अपने खिलौने', 'टेढे मेढे रास्ते', 'भूले बिसरे चित्र' आदि का निर्माण किया था। ये सभी उपन्यास म्रियमाण रोगी की तरह बहके हुए थे पर 'चित्रलेखा' एकदम अस्वाभाविक रूप से असाधारण रचना बन गई और यह समस्या हो गई कि इस उपन्यास को कौन सी श्रेणी मे रखा जाये। 'चित्रलेखा' ने मात्र मानव को समाज की पृष्ठभूमि का रूप प्रदान किया और प्रेम को रोमान्स की भूमि पर एक साधु और सामन्त की कसौटी बनाकर पाप और पुण्य का, धर्म की सत्ता का उद्घाटन किया। 'चित्रलेखा' उस प्रकार का कथा-प्रयोग था जो युग से एक प्रश्न पूछता था कि समय और व्यक्ति मे विराट् कौन है? 'चित्रलेखा' एक दैवी घटना थी, उसी के आसपास एक नवीन रचना का जन्म हुआ, 'सुनीता' जो एक ऐतिहासिक दुर्घटना थी। ऐतिहासिक दुर्घटना इस कारण कि 'सुनीता' का उपन्यासकार सहसा ही एक ऐतिहासिक दृष्टि दे बैठा जो सभवत: उस समय उसके पास नही थी जब उसने लिखने के पूर्व लेखनी उठाई थी। अपनी असाधारण प्रतिभा-क्षमता द्वारा वह अपने से इस प्रकार खेलता-कूदता नही था जिस प्रकार 'अज्ञेय' अपने निजी रूप का शैतान भी अपने पात्र के हृदय मे बैठा देता है।

जैनेन्द्र पात्रो को सामाजिक यथार्थ की सार्थकता तो नही ही प्रदान करते, उनके कार्यों और व्यवहारो को विश्वसनीयता भी नही दे पाते। इनके पात्र देखने मे बहुत सहज होते हैं किन्तु वास्तव मे वे विशेष प्रकार की व्यक्तिवादी भूख और लेखक के गूढ आरोपित दर्शन से परिचालित होते हैं। वे अपनी स्थितियो मे सदा वह रास्ता चुनते हैं जो सहज नही होता और जिसे सामाजिक चेतना और स्वास्थ्य वाला कोई दूसरा व्यक्ति नही चुनता। इसलिए जैनेन्द्र के पात्र सामाजिक विसगति से फूटते नही, व्यक्ति की विसगतियो मे जीते सामाजिक परिवेश से बेखबर रहते हैं।

एक और उपन्यास साहित्य के क्षेत्र मे अवतरित हुआ—'शेखर एक जीवनी'। 'शेखर' एक सच्चा मनुष्य है, वह महान् भी है और दीन भी। महान् इसलिये है कि उसकी जिज्ञासा मे लगन है, निष्ठा है, दीन इसलिए है कि तीव्रता के कारण ही वह कई जगह सच्चा शोधक न रहकर केवल हेतुवादी रह जाता है और उसका हेतुवाद दयनीय जान पडने लगता है। 'शेखर' घनीभूत वेदना की केवल एक रात मे देखे गये (विजन) को शब्दबद्ध करने का प्रयत्न करता है, दु:ख को भोगता है

और चाहे स्वय सबको मुक्ति देना वह न जाने किन्तु जिनको माजता है उन्हे यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखे। 'शेखर' ने अपने अनुभव से जाना है कि अहता, भय और सैक्स ये तीन महती प्रेरणाएँ हैं जो मानव के जीवन को परिचालित करती हैं। मानव इन्हे पैतृक रूप से जन्म के साथ ही पाता है, बाद की परिस्थिति या व्यवहार से नही। इन मूलभूत प्रश्नो को 'शेखर' अपने जीवन की घटनाओ से प्रत्यक्ष करता है और इन प्रश्नो से सबद्ध प्रश्न और उपकरण उसकी सत्यान्वेषी दृष्टि और प्रबुद्ध सवेदना को झकझोरते हुए गुजरते चलते हैं, यह जीवन चलता रहता है। ईश्वर मनुष्य के स्वतन्त्र चिन्तन और विकास के लिए बहुत बडा प्रश्न बना हुआ है। मनुष्य परम्परा से ईश्वर के अस्तित्व को ओढता आया है। 'शेखर' को बचपन से ही इस कही न दिखने वाली हर जगह टाग अडाने वाली सत्ता के प्रति सदेह है। वह बार-बार उसका अस्तित्व देखना चाहता है परन्तु वह अनुभव से सीखता है कि सारे कार्य ईश्वर के बिना होते चल रहे हैं और झूठमूठ मे यह कल्पित शक्ति हमे आतकित किये है। 'शेखर' जीने की प्रक्रिया मे तमाम प्रश्नो से जूझता है। उन प्रश्नो का उत्तर वह फार्मूले से नही, अपने अनुभवो और अन्वेषो से पाना चाहता है, इसीलिए वह फार्मूलेवादी लोगो के साथ खप नही पाता।

'अज्ञेय' ही का एक और उपन्यास अपना अलग व्यक्तित्व लेकर प्रकट हुआ—'नदी के द्वीप' जिसका असपृक्त क्षण जीवन का छोटा सा खण्ड रूप था।

वास्तव मे 'अज्ञेय' का यह नवीन प्रयोग एक टेकनीक का प्रयोग था जिसमे उन्हें आशातीत सफलता प्राप्त हुई। इस उपन्यास का एकाग्र चिन्तन सामाजिक सघर्ष से बिल्कुल दूर था और उसने शरण ले ली थी कि एक निर्लिप्त जीवनेच्छुक साधक की भाति यमुना की कछारो मे, कुदसिया बाग मे, सात ताल के तट पर कश्मीर की नीरवता मे। 'अज्ञेय' का ही एक अन्य उपन्यास 'अपने अपने 'अजनबी' मृत्यु की कल्पना पर लिखा गया सुन्दर उपन्यास है।

इसके बाद रेणु' का उपन्यास 'परती परिकथा' सामने आया। यह एक आचलिक उपन्यास था। 'परती परिकथा' बध्या धरती के परिप्रेक्ष्य मे कुछ पात्रों के जीवन-चरित्रो का एलबम हो सकता है पर उसके चित्र इतने यथार्थ रूप से उभरे हुए सुर्ख हैं कि उसके समक्ष 'बूद और समुद्र' के पात्र सकुचित हृदय के मध्यम चरित्र बन कर रह जाते हैं। 'परती परिकथा' एक स्वतन्त्र और मौलिक उपन्यास है जो स्वय समीक्षात्मक मानदण्डो और औपन्यासिक तत्त्वो मे एक नवीन परिवर्तन लाता है।

द्विवेदी द्वारा रचित 'बाणभट्ट की आत्मकथा' भी इसी प्रसग की एक रचना है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' इस कारण असाधारण रचना है कि उसमे साधारण तत्त्व होते हुए भी असाधारण कुछ भी नही है।

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास हमारे सामने अन्तश्चेतनावादी यथार्थ को प्रस्तुत करते हैं। वर्जनाओ का जितना सुन्दर और मार्मिक चित्रण इलाचन्द्र जोशी के पात्र प्रस्तुत करते है उतना हिन्दी के अन्य उपन्यासो के नही। इनके पात्र फ्रायड की कोटी के चिन्तक है, इनके पाचो उपन्यासो के नायक वासनाओ के शिकार बनकर समाज के भीतर क्षोभ भर देते है। 'सन्यासी' का नदकिशोर, 'पर्दे की रानी' का महीप, 'लज्जा' के लज्जा और रज्जू सभी दमित वासनाओ की ओजमयी प्रेरणा लेकर जीवन मे अशान्त भटकते हैं और इनके माध्यम से समाज पर पड़ा सफेदी का आवरण अपने आप हटकर छिन्न-भिन्न हो जाता है।

इसके उपरान्त हमे कुछ विशिष्ट प्रयोग भी देखने को मिलते हैं। 'ग्यारह सपनो का देश' दस लेखको द्वारा रचित समन्वित उपन्यास है जो सचमुच सपना बन कर रह गया है, उपन्यास नही बन पाया है। इसी प्रसग मे समन्वित रूप से लिखा गया एक अन्य उपन्यास 'एक इ च मुस्कान' जो राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी का सयुक्त लेखन है, सफल कहा जा सकता है।

इसके बाद एक विशिष्ट उपन्यास हमारे सामने आता है धर्मवीर भारती का 'सूरज का सातवा घोडा'। टेकनीक की दृष्टि से इसे विशिष्ट उपन्यास माना जा सकता है। इसमे 'माणिक' प्रेम के लिए प्रेम नही करते। वे प्रेम के माध्यम से स्वय को पहचानते हैं। 'माणिक' ने तीन लडकियो से प्रेम किया है और वे प्रेम के माध्यम से इन्हे पहचानने की कोशिश करते हैं। 'माणिक' जीवन के बिखराव मे से कुछ ऐसी समस्याएँ चुनते हैं जिनसे हमारी वास्तविक स्थिति का भान होता है। 'माणिक' के इस प्रेम मे वास्तविकता का दर्द है—प्रेम, यह एक शब्द पूरे समाज की नग्नता को मूर्त्त करने मे समर्थ है। यहा आकर प्रेम अपनी पारिभाषिक स्थितियो को छोडकर अपना रूप स्वय गढता है और पारम्परिक विचारधाराओ और मान्यताओ को चुनौती देता है। उपन्यास की दृष्टि आज के परिवेश की है जिसमे प्रेम जी रहा है और प्रेम का यथार्थ जी रहा है।

'चादनी के खण्डहर' गिरधर गोपाल की कृति है। यह भी एक नूतन शिल्प-प्रयोग है। इसमे लेखक ने 'बसन्त कुमार' के परिवार के मात्र चौबीस घटो का चित्रण कर समय-सम्बन्धी नया प्रयोग किया है।

इस प्रकार प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास आज के परिवेश मे जी रहा है जहा यान्त्रिकता है, घुटन और सत्रास है, स्व-दृष्टि है। आज के उपन्यास को परिभाषा के सक्षिप्त सूत्र मे बाघ पाना सभव नही है और न उचित ही। आज के उपन्यास वर्त्तमान मानव के बिखराव, जटिलता, अस्पष्टता, आस्थाहीनता की तस्वीर सामने रखते हैं। हा, एक सन्तोष हमे जरूर होना चाहिये कि चाहे इन उपन्यासो का स्वर निर्माण

व आशा का न हो लेकिन अपनी विशदता और विविधता मे देश और समाज के हर स्तर को आज के उपन्यास ने पाने की कोशिश की है ।

आज के उपन्यास मे आत्म-सघर्ष के नये आयाम हैं। प्राचीन उपन्यास की भाति आज के उपन्यास का उद्देश्य उपदेश अथवा मात्र रोमास नही रह गया है। आदर्श और यथार्थ बीते हुए युग की बातें हैं। आज के उपन्यास मे उपन्यासकार स्वय जीता है, जीवन को पहले अनुभव करता है और फिर लिखता है। आज के उपन्यास मे मानसिक सघर्ष है जिसे पढ कर कुछ देर के लिये हमे सोचने को मजबूर हो जाना पडता है।

उपन्यास अब जीवन से इस कदर जुड गया है कि वह जीवन का प्रतिरूप हो गया है, उसमे अनैतिक कुछ नही है, छुपाव और दुराव नही है। आज के उपन्यास का इतना विराट् विस्तार, विविधता, इतने तरह के रूपरग, शैली और सदर्भ, व्यक्ति और समाज के अनेक जाने अनजाने पक्ष, साथ ही इतनी अधिक निराशा, घुटन और अन्तराभिमुखता को देखकर लगता है कि उपन्यासकार की निगाह दूर तक जाती है, गहराई तक देखती है पर कुछ हाथ न आने की विकलता से हार जाती है ।

**कथा-शिल्प तथा नवीन दिशा**

शिल्प के सम्बन्ध मे अधिकाश आलोचक निश्चयात्मक रूप से कुछ कहने मे सकोच करते हैं। डा० त्रिभुवन सिंह की मान्यता है कि 'ऐसे ही न जाने कितने प्रयोग आधुनिक हिन्दी उपन्यास मे किये जा रहे हैं। यह उनका विकास-काल है। अत शिल्प-प्रकार के सम्बन्ध मे निश्चित रूप से कुछ भी कहना न तो सभव है और न उचित ही।"[१]

डा० प्रेम भटनागर ने हिन्दी उपन्यास-शिल्प के क्षेत्र मे असगतियो एव भ्रान्तियो के निवारण हेतु शिल्प-विधियो को प्रश्नात्मक दृष्टि से आँकने का भरसक प्रयत्न किया है। उनका वर्गीकरण इस प्रकार है[२]

१ वर्णनात्मक शिल्प-विधि
२. विश्लेषणात्मक शिल्प-विधि
३. प्रतीकात्मक शिल्प-विधि
४. नाटकीय शिल्प-विधि
५ समन्वित शिल्प-विधि

वैसे 'शिल्प' अग्रेजी-शब्द 'टेकनीक' का हिन्दी-अनुवाद है। अग्रेजी शब्द-कोष मे शिल्प की व्याख्या इस प्रकार की गई है · 'कलात्मक कार्यवाही की वह रीति

---

१. 'हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद' प्रथम स०, पृष्ठ ८•
२ 'हिन्दी उपन्यास-शिल्प बदलते परिप्रेक्ष्य', प्रथम स०, पृष्ठ ३८

जो सगीत अथवा चित्रकला मे प्राप्य है तथा कलात्मक कारीगरी।"[१] बृहद् हिन्दी कोश' के अनुसार · 'शिल्प से अभिप्राय हाथ से कोई वस्तु तैयार करने अथवा दस्तकारी या कारीगरी से है।"[२]

टेकनीक के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं यथा क्रेफ्ट, स्ट्रक्चर, फार्म आदि। इनमे से सर्वाधिक प्रयोग फार्म का होता रहा है।

रूप टेकनीक नही है, शिल्प-विधि का असली पर्यायवाची रूपाकार है जो किसी भी साहित्यिक कृति को एक विशिष्ट आकार देता है।

जैनेन्द्र के कला और शिल्प के सम्बन्ध मे अपने स्वतन्त्र विचार हैं: 'शिल्प अनावश्यक नही है। कारीगरी को किसी तरह छोटी चीज नही समझा जा सकता। लेकिन उससे किनारे बनते हैं, नदी का पानी नही बहता।'[३] स्पष्ट है कि जैनेन्द्र भी शिल्प की अपेक्षा वस्तु-तत्त्व पर अधिक बल देते हैं, तभी तो वे मानते है कि शिल्प द्वारा तटो का निर्माण होता है, प्राण-प्रवाह करने वाले जल का नही। उनके अनुसार शिल्प का कार्य ही साहित्य को गति देना है। उन्होने लिखा है कि 'टेकनीक' उस ढाचे के नियमो का नाम है। पर ढाचे की जानकारी की उपयोगिता इसी मे है कि वह सजीव मनुष्य के जीवन मे काम आये। वैसे ही 'टेकनीक' साहित्य-सृजन मे योग देने के लिये है। शरीर-शास्त्रविद् हुए बिना भी जैसे प्रेम के बल से माता-पिता बनकर शिशु सृष्टि की जा सकती है, वैसे ही बिना 'टेकनीक' की मदद से साहित्य सिरजा जा सकता है।'[४]

इसके विपरीत पश्चिम के सशक्त उपन्यासकार हेनरी जेम्स मानते हैं कि "वह सयय बीत गया जब शिल्प को मात्र साधन माना जाता था, जिसके द्वारा अनुभूत सत्य को गठित कर अपने हित मे ढाल दिया था।"[५]

**कथावस्तु और शिल्प**

उपन्यास के तत्त्वो के अन्तर्गत कथावस्तु को प्रथम और अनिवार्य तत्त्व के रूप मे सभी आलोचको ने स्वीकारा है। प्रमुख विचारक इसे कहानी अथवा उपन्यास मे वही स्थान देते रहते हैं जो शरीर मे अस्थियो को मिलता रहा है। हिन्दी साहित्य मे उपन्यास के क्षेत्र मे जब पहले पहल शिल्पगत प्रयोग हुए उस समय तक

---

१. 'आक्सफोर्ड डिक्शनरी', प्रथम स०, पृष्ठ १२५८
२. प्रथम स० पृष्ठ १३३४
३. 'हिन्दी साहित्य का श्रेय और प्रेय' प्रथम सं०, पृष्ठ ३५५
४. 'साहित्य का श्रेय और प्रेय', प्रथम स०, पृष्ठ ३७०
५. टाइम एण्ड द नावेल, प्रथम स०, पृष्ठ २३४

कथावस्तु और शिल्प का सम्बन्ध अटूट एव असदिग्ध माना गया, किन्तु इस क्षेत्र मे ज्यो-ज्यो नये शिल्पगत प्रयोग हुए, वस्तु तत्त्व झीना, निर्बल एव सदिग्ध होता चला गया।

नये उपन्यासकारो ने विस्तार की अपेक्षा गहराई, स्थूलता की अपेक्षा सूक्ष्मता को प्रश्रय दिया। समय और स्थान भी अब सीमित होते जा रहे हैं। कथानको मे कथा केवल एक दिन तक और कही कही मात्र एक घण्टे तक सीमित हो गई है। स्थान के लिए भी उपन्यासकार को प्रेमचन्द की भाँति काशी से उदयपुर तक और जोशी की भाति मसूरी से कलकत्ता तक दौड लगाने की आवश्यकता नही रह गई। 'चादनी के खण्डहर' मे गिरधर गोपाल ने केवल इलाहाबाद सिविल लाइन के घेरे मे अपनी कथावस्तु को आबद्ध रखा है। यज्ञदत्त शर्मा ने 'स्वप्न खिल उठा' मे केवल एक घटे के कथानक मे सौ वर्ष की पूरी लम्बी पृष्ठभूमि को सयोजित किया है। आधुनिक उपन्यासो मे जहा शिल्प ही शिल्प है वहा घटनाएँ ढूँढना व्यर्थ है। वहा तो केवल मानसिक घटको का फुट-पुट दृष्टिगोचर होगा। कथा-वस्तु एव घटनाओ के जाल को अनिवार्य स्वीकार न करने वाले विचारको को निरा महत्त्वहीन नही कहा जा सकता। कथा-तत्त्व की भर्त्सना करने वाले ये विद्वान तर्क देकर बात करते हैं।

इन आलोचको के मतानुसार कथानक के आदि, मध्य और अन्त की कोई निश्चित, पूर्ण नियोजित योजना की आवश्यकता ही नही है। यह भी आवश्यक नही कि किसी विषय को चरमोन्नत अवस्था तक पहुँचाया जाय और उसके निमित्त समस्त अन्तर्दशाएँ, गौण घटनाए, एव विभिन्न भूमिकाए क्रमपूर्वक नियोजित की जायें। ये पीठिका पर नही, सिद्धि पर, घटना पर नही, पात्र या विचार पर सारा ध्यान केन्द्रित रखते हैं।

'चादनी के खण्डहर' मे दिवा-स्वप्नो, यथार्थ-स्वप्नो और सकेतो के साथ रूपको का भी सफल नियोजन मिलता है। किसी भी प्रधान कथा को महत्त्व न देकर गौण कथाओ का तारतम्य और एक मे से दूसरी कथा का विकास उपन्यास-शिल्प की वर्तमान गतिविधि की ओर स्पष्ट सकेत है। धर्मवीर भारती द्वारा रचित 'सूरज का सातवा घोडा' इसका उदाहरण है। शिवप्रसाद मिश्र की 'वहती गगा' मे सत्रह कहानिया स्वतन्त्र रूप से वही हैं।

प्रेमचन्दोत्तर काल के उपन्यास-साहित्य मे नवीन शिल्प-प्रयोगो के कारण कतिपय उपन्यासो के वस्तु-तत्त्व मे मानवीय सवेदना का प्रश्न भी विचारणीय है। एक ओर 'सन्यासी', 'त्यागपत्र', 'शेखर एक जीवनी', 'चाँदनी के खण्डहर', गुनाहो का देवता' आदि उपन्यास है जिनके कथानक मानवीय सवेदना से भरपूर हैं तो दूसरी ओर 'अपने-अपने खिलौने', 'सितारो का खेल', 'गिरती दीवारें' 'बडी-बडी आँखें',

'पतवार','भूदान', 'यथार्थ से आगे', 'प्रेम की भेंट', 'उदयास्त', 'आभा', 'जन प्रवाह', 'विश्वास की वेदी पर' आदि रचनाएँ हिन्दी के प्रतिष्ठित कथाकारो द्वारा रचित होने पर भी मानवीय सवेदना से बहुत दूर है। यदि कतिपय आलोचक इन रचनाओ मे मानवीय सवेदना देखते हैं तो यह अप्रासगिक आरोपण मात्र है। इन कथाकारो की उद्देश्य-प्रियता ने अपनी-अपनी वैचारिक बोझिलता के कारण एक ओर वस्तु-तत्त्व को झीना बना दिया, दूसरी ओर मानवीय सवेदना को इन मे आबद्ध होने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

**चरित्र-चित्रण और शिल्प**

शिल्प और चरित्र-चित्रण का सम्बन्ध अटूट है। उपन्यास मे कथावस्तु की उपादेयता पर दो मत सम्भव है, किन्तु चरित्र-चित्रण के विषय मे विवादास्पद मत अभी नही उठे। उपन्यास का प्रधान उपजीव्य मानव है जो अपनी नाना भावनाओ, विविध कामनाओ और विभिन्न भगिमाओ एव मान्यताओ के साथ चित्रित होकर उपन्यास-शिल्प को गति देता है। हिन्दी उपन्यास के प्रसिद्ध शिल्पी प्रेमचन्द ने कहा है कि 'मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यो को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है।'[१] मानव चरित्र का चित्र नाना विधियो द्वारा प्रकाश मे आता है। चरित्राकन के लिये मुख्यत: दो शिल्पविधियो का प्रयोग होता है:

१. वर्णनात्मक शिल्प-विधि
२. विश्लेषणात्मक शिल्प-विधि

जैनेन्द्र की 'मृणाल', जोशी की 'लज्जा', 'निरजना','नन्दकिशोर','पारस' तथा अज्ञेय के 'रेखा','शशि','शेखर', 'भुवन' अनेक ऐसे पात्र हैं जो अपने को अन्तर्द्वन्द्वो से लेकर अन्तर्विवादो तक विश्लेषण करने की क्रिया मे अत्यधिक कुशलता प्राप्त कर चुके हैं।

विश्लेषणात्मक शिल्प-विधि के चरित्र-प्रणेता कथाकार अपने-अपने उपन्यासो में 'टाइप' न देकर व्यक्ति प्रस्तुत करते है और ये व्यक्ति सब अपने मे विशिष्ट व्यक्ति होते हैं, स्थिर रहना तो मानो ये जानते ही नही। इलाचन्द्र जोशी के 'पारस' और 'नन्दकिशोर' तथा अज्ञेय के 'शेखर' और 'भुवन' ऐसे ही पात्र है। ये साधारण तो हैं ही, पर अह से परिपूर्ण भी है। जोशी ने प्राय अपने सभी उपन्यासो के नायको के अह पर निर्मम प्रहार किया है। यह ठीक है कि अन्त मे ये पात्र उदासीकरण की प्रक्रिया द्वारा परिस्थिति के अनुरूप अपने चरित्र एव व्यक्तित्व को बदल लेते हैं।

---

१. 'कुछ विचार' प्रथम स०, पृष्ठ ३०

विश्लेषणात्मक चरित्राकन-विधि अनेक घटको मे प्रस्तुत हुई है। कही उपन्यासकार द्वारा पूर्व-वृत्तात्मक-विधि द्वारा 'त्यागपत्र' मे कही सहस्मृति-परीक्षण-विधि द्वारा 'जहाज का पछी' मे, कही स्वप्न-विश्लेषण-विधि द्वारा 'शेखर एक जीवनी' मे, उपन्यासकारो ने विचित्र और विविध साधनो का आश्रय लेकर इसे उद्घाटित किया है।

साराश यह कि चरित्र-चित्रण के लिए चाहे वह किसी भी शिल्प-विधि का हो, मौलिक उद्भावना और उदात्त कोटि की कल्पना का होना अनिवार्य शर्त है।

**शिल्प और विचार**

आज विचार का न रखा जाना उपन्यास को श्रेष्ठता की सीढी से गिरा देता है। कई विद्वान उसे उपन्यास ही नही मानते जो 'चित्रलेखा' की तरह पाप और पुण्य या 'सुनीता' की तरह हिंसा और अहिंसा आदि समस्याओ पर अपनी चिन्तना और प्रतिक्रिया अभिव्यक्त न करे। ये विचार, समस्याएँ, प्रश्न ही उन्हे मनन, विश्लेषण के लिए अवसर देते हैं।

विचार प्रतिपादन भी दो प्रकार से सयोजित होता है :

१ प्रत्यक्ष

२ परोक्ष

ये दो विधियां इस क्षेत्र मे अपनाई गई हैं। प्रत्यक्ष विधि द्वारा उपन्यासकार जीवन-अनुभूत क्रिया एव सत्य को स्वय कहकर पाठक तक पहुँचाता है। इस विधि के प्रणेता प्रेमचन्द हैं। प्रेमचन्द अपने पात्रो को अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की छूट बहुत ही कम मात्रा मे देते हैं। अपने उपन्यासो मे वे अपने विचारो को आग्रह पूर्वक व्यक्त करने का स्थान खोजते हैं।

इधर इलाचन्द्र जोशी क्रमश समाज की व्यापक स्थितियो के चित्रण से अलग होकर अधिकाधिक सीमित भूमि पर आते जा रहे हैं। इस प्रकार सम्भावना की जा सकती है कि धीरे-धीरे उपन्यासकार साहित्यिक मूल्यो को छोडकर वैज्ञानिक मूल्यो को प्रधानता देने लगेंगे। विज्ञान के नाम पर हीन और रुग्ण भावनाओ का चित्रण ही श्रेष्ठ साहित्य के नाम पर खपने लगेगा लेकिन इस प्रक्रिया द्वारा श्रेष्ठ साहित्य के निर्माण की आशा नही की जा सकती।

**शिल्प और शैली**

शैली से अभिप्राय उस विशिष्ट एव वैयक्तिक अभिव्यक्ति-विधि से है जिसके द्वारा हम किसी लेखक को पहचानते हैं।

कुछ साहित्यकार और आलोचक शैली को व्यर्थ की सज्जा मानते हैं, जिसके द्वारा शैलीकार की मन:तुष्टि तो हो सकती है किन्तु साधारण पाठक का कोई लाभ नही होता। फिर भी शैली सभी कथाकारो को अपनानी पडती है। वस्तुत' यही वह तत्त्व है जिसके द्वारा कोई लेखक पहचाना जा सकता है। कथाकार और उसकी रचना मे आलोचको ने जो शरीर और आत्मा का सम्बन्ध वताया है, वह सही है। शैली वाह्य परिधान मात्र ही नही है, अपितु शब्द की वह शक्ति है जो परिधान को रग कर प्रस्तुत करती है। किसी भी कथ्य को जिस शिल्प मे प्रस्तुत किया जाता है वह शैली रूपी कारीगर द्वारा ही किया जाता है। इस दृष्टि से शैली और शिल्प का सम्बन्ध अटूट है। इमी कारण भारतीय विद्वानो ने अभिव्यक्ति की विशिष्टता तथा भापा के रूप-चमत्कार का मेल होने के कारण शैली को साहित्य-रचना के चौथे तत्त्व की सज्ञा दी है।

शैली व्यक्तिपरक होती है, शिल्प वस्तुपरक। साहित्यकार की रुचि उसके शिल्प को प्रभावित तो करती है परन्तु उसके अनुरूप ही शिल्प का निर्माण नही हुआ करता, शैली तो कथाकार की रुचि के अनुरूप ही नियोजित होती है। समाज, इतिहास या अचल का प्रवन्धात्मक चित्रण मात्र वर्णनात्मक शिल्प-विधि द्वारा ही सयोजित हो सकता है अतएव यह वस्तुपरक हुआ, विषयपरक हुआ, जवकि समाज, व्यक्ति, इतिहास या मनोविज्ञान, राजनीति आदि किसी एक शैली को अपनाना उपन्यसकार के लिए आवश्यक नही है। 'परख', 'सुनीता', 'गवन', 'गोदान', 'लज्जा', 'सन्यासी', 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप'—जैनेन्द्र, प्रेमचन्द, जोशी और अज्ञेय का अपना-अपना व्यक्तित्व है और अपनी-अपनी स्वतन्त्र शैली है जो इन्हे एक दूसरे से भिन्न करती है।

अधिकतर नाटकीय शिल्प के उपन्यासो मे सवाद शैली, और प्रतीकात्मक शिल्प के उपन्यासो मे सकेत-शैली का उपयोग हुआ है, परन्तु इनमे इनका प्रयोग घटनाओ और पात्रो मे नाटकीय स्थिति के वेग को गति देने या इनमे प्रतीकात्मकता के सफल निर्वाह के लिए हुआ है। साथ ही इसमे अन्य शैलिया भी उपलव्ध होती है, जैसे स्व० धर्मवीर भारती के 'गुनाहो का देवता' मे अन्तर्कथा तथा अन्तर्वेदना की दीप्ति के लिए आत्मविवाद की शैली को अपनाया गया है।

शिल्प मे विकास के कारण अव प्रौढत्व आ गया है। आज के उपन्यासो मे क्लिष्टता के स्थान पर सरलता, जटिलता के स्थान पर सुगमता, वक्रता के स्थान पर सहजता का आना शैली के विकास के लक्षण है।

आज के उपन्यास कथ्य के वजाय शिल्प को अधिक महत्त्व देते हैं। 'सूरज का सातवा घोडा'—सात कहानियो मे एक कहानी का निरन्तर गतिशील रहना शिल्प की दृष्टि से विशिष्ट प्रयोग है। आज शिल्प और कथ्य मे परस्पर होड़ लगी हुई है जिसमे शिल्प का पलडा अधिक भारी नजर आ रहा है।

# 3 भारती के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय

## गुनाहो का देवता

भारती के दोनो उपन्यास 'गुनाहो का देवता' तथा 'सूरज का सातवा घोड़ा' पर्याप्त प्रसिद्धि पा चुके हैं—पहला अपनी आध्यात्मिक, मनोरम एव करुणा-सजल प्रेम-कथा के कारण और दूसरा नितान्त नूतन रूप-शिल्प के कारण। एक नही, अनेक सुसस्कृत रुचि वाले सहृदय पाठको को कहते सुना गया है कि उन्होने जितनी बार 'गुनाहो के देवता' को पढा, हर बार आसुओ के रस मे डूब गये। आज के युग मे जब उपन्यास के कथानक-सौष्ठव एव रमणीयता के गुण निकलते जा रहे हैं और वह यथार्थ जीवन का विशृ खल चित्र बनता चला जा रहा है तब भारती के इन उपन्यासो को देख सन्तोष होता है। भारती मे चिर जाग्रत, चिर निर्माणशील कल्पना, देशकाल या युगसत्य के प्रति सतर्कता और साथ ही अपनी भारतीय परम्परा का ज्ञान एव उसमे निहित शाश्वत सत्य एव कल्याण को आयत करने का आग्रह है। 'गुनाहो का देवता' एक दु खान्त प्रेम-कथा है। इसका नायक है चन्द्रकुमार कपूर, जो प्रयाग विश्वविद्यालय मे प्रथम श्रेणी का विद्यार्थी रहा है और अब रिसर्च-स्कालर है। चन्दर पर उसके सीनियर टीचर डा० शुक्ला का बडा स्नेह है और वह उनके परिवार के सदस्य-सा हो गया है। डा० शुक्ला की एकमात्र कन्या सुधा आठवी कक्षा से ही चन्दर के स्नेह-शासन मे रही है और वह अनायास उसके अनुराग मे रग उठी है। चन्दर के साथ हसते-खेलते, लडते-झगडते, रीझते-खीझते उसके दिन बीते हैं। उसका सम्पूर्ण हृदय, सारा व्यक्तितत्व चन्दरमय हो उठा है। चन्दर भी सुधा को बहुत प्यार करता है और डा० शुक्ला एव सुधा के निश्छल विश्वास एव सहज स्नेह से एक गौरव का अनुभव करता हुआ अपने प्रेम को बहुत ऊचाई पर रखता है। जाति-व्यवस्था, कुल-मर्यादा, विवाह-सम्बन्ध आदि के विषय मे डा० शुक्ला के विश्वास पुराने हैं। सुधा के विवाह की बात चलती है। वह इसका बडा विरोध करती है, किन्तु चन्दर, पापा के प्यार की, अपने अधिकार की चर्चा करके एक प्रकार से जबर्दस्ती उसका विवाह करा देता है। सुधा के जाने के बाद डा० चन्द्रकुमार कपूर मे एक विचित्र परिवर्तन आ जाता है। उसका विश्वास खो जाता है और वह सुधा से मिलने पर

उसके प्यार का घृणा-पूर्वक मजाक उडाता है जिससे सुधा अत्यधिक व्यथित हो उठती है। किन्तु बाद मे चन्दर के अन्तर्मन ने ही उसे बडा धिक्कारा और वह पश्चात्ताप करता है। अन्तिम बार दो दिन के लिए सुधा चन्दर के पास अपने पति के साथ प्रयाग आती है। एक दिन तथा एक रात उसे चन्दर के साथ अकेले रहने का मौका मिलता है। चन्दर अपने अपराधो को स्वीकार करता है कि सुधा को खोकर वह टूटता गया है। सुधा बडे स्नेह से उसे जता देती है कि वह अब भी चन्दर की है और वैवाहिक जीवन उसका बडा कष्टमय है, यद्यपि पति तथा घर के लोग उसका बडा ध्यान रखते है। वह गर्भवती है और अस्थि-शेष रह गयी है। चन्दर इस बार बड़े स्नेह से उसे तथा कैलाश को विदा करता है। थोडे ही दिनो बाद दिल्ली से डा० शुक्ला का तार पाकर वह वहा पहुँचता है। सुधा को गर्भपात हो गया, जिससे वह मरणासन्न है। बेहोशी की हालत मे वह बार-बार चन्दर को याद करती है और होश आने पर उसकी चरण-रज लेती है। किन्तु डाक्टर उसे बचा नही पाते और वह पापा को, विनती को तथा चन्दर को बिलखता छोडकर चल देती है। चन्दर जो उसका देवता था और जिसने गुनाहो के मार्ग पर चलकर उसे मृत्यु की ओर अग्रसर किया, बिल्कुल शून्य-सा हो जाता है। यही मुख्य कथा है।

विनती, गेसू और पम्मी की किंचित् प्रासगिक कथाए भी है। विनती का चन्दर के प्रति भक्ति-भाव अथवा चन्दर से पम्मी का प्रेम प्रासगिक न होकर प्रधान कथा का ही एक अग है। बर्टी के निष्फल प्रेम और पागलपन मे भी एक विशेष आकर्षण है। जहा तक कथानक का प्रश्न है वह बडा ही प्रासगिक एव सुनियोजित है। कही भी कथा को 'अवरुद्ध करने वाले स्थल नही हैं और वह मनोरम भूमियो से होती हुई सरसता के साथ अग्रसर रहती है। चन्दर तथा सुधा के सरस-सुखद व्यवहार, दोनो के प्रेमाकर्षण तथा भाव-द्वन्द्वो के चित्रण मे पर्याप्त रमणीयता है।

कथा का केन्द्र-बिन्दु सुधा है और आद्यन्त पाठक की दृष्टि उसी पर रहती है। विवाह के पूर्व के प्रसग सुखद है किन्तु विवाह के बाद सारी कथा एक ऐसी व्यथा मे डूबकर आगे बढती है कि पाठक का हृदय आर्द्र हो उठता है। मरणासन्न सुधा के जीवन का अन्तिम दृश्य तो बडा ही करुणापूर्ण है। सुधा के मुह से निकला हुआ प्रत्येक वाक्य हमारे हृदय को वेदना से भर देता है। पुस्तक बन्द कर देने पर भी बहुत दिनो तक हम सुधा की स्मृति मे जीवित रहते हैं। सचमुच सुधा का चरित्र बडा ही 'इम्प्रेसिव' है। पढने वाले हर पाठक की यह इच्छा होती है कि वह चन्दर बन पाए और उसके भावी जीवन को कोई सुधा बनकर सरस कर दे।

प्रमुख पात्रों के चरित्र को पूरा विकास-स्वातन्त्र्य मिला है। चन्दर के स्वभाव, सुधा के प्रति उसके प्रेम, अपने दायित्व के बोध एव प्रेम-सम्बन्ध मे एक उच्च

आदर्शात्मक भावना तथा भावुकता के कारण सुधा के विवाह के लिए आग्रह, इस विवाह से उत्पन्न उसके हृदय की मूक वेदना, लडकियो के आचरण तथा पम्पी के मासल सौंदर्य के प्रति उसका सहज मानवोचित आकर्षण, सुधा से एकान्त मे मिलने पर उसका नितान्त अप्रत्याशित आचरण, इस आचरण पर उसके मन की भर्त्सना एव भाव-परिवर्तन, लडकियो के सम्बन्ध मे बर्टी के विचारो की उसके मन पर प्रतिक्रिया तथा तदनुकूल आचरण, प्रयाग मे आर्द्र हुई सुधा के स्नेह से पुन उसके देवत्व के उदय एव निर्वाणोन्मुखी दु खिता प्रिया के हृदय-द्रावक प्रलापो की उसके मन पर प्रतिक्रिया आदि के चित्रण मे मानव-मनोविश्लेषण की शक्ति का सुन्दर परिचय मिलता है। आदर्श प्रेम-भावना एव यथार्थ मानवीय-वासना के द्वन्द्व का बडा सहज-सुन्दर चित्रण चन्दर के चरित्र मे मिलता है।

सुधा मे द्वन्द्व नही है। किशोरावस्था से ही चन्दर उसके जीवन का सर्वस्व बन बैठा है। उससे लडने-झगडने, रीझने-खिझाने, रूठने-मनाने मे ही उसके प्रारम्भिक जीवन के दिन बीते हैं। चन्दर की कल्पनाओ मे ही वह सोती-जागती है और उसके सुख-स्वास्थ्य की चिन्ता ही उसकी प्रधान चिन्ता है। चन्दर उसके प्राणो मे इतना रम गया है कि वह उससे भिन्न जीवन की कल्पना ही नही कर पाती। किन्तु जब चन्दर ने अपने आदर्शवाद, कर्त्तव्य-भावना एव आत्म-गौरव की प्रेरणा से सुधा को विवाह के लिए बाध्य कर दिया तो उसने अत्यधिक विवशता का अनुभव किया और उसका सारा उल्लास समाप्त हो गया। वह बहुत रोई-खीझी। यदि चन्दर विवाह के समय तक निरन्तर उसे सहारा न देता रहता तो सम्भव है किसी भी समय वह विवाह से इन्कार कर देती। विवाह के बाद भी पति ने उसके शरीर को भले ही पा लिया, मन को न पा सका। किन्तु चन्दर की अनुगता सुधा ने ससुराल से लौटने पर जब उल्लास से भर कर पास आई सुधा को चन्दर ने व्यग्य-बाणो से विद्ध किया तो सुधा ने हाथ से शादी वाले चूडे उतारकर छत पर फेंक दिये, बिछिया उतारने लगी, और पागलो की तरह फटी आवाज मे बोली—"जो तुमने कहा, मैंने किया, अब जो कहोगे वही करूगी, यही चाहते हो न ? और अन्त मे उसने अपनी बिछिया उतार कर छत पर फेंक दी।"[1] सुधा के सम्पर्क मे, उसके निश्छल स्नेह मे चन्दर की खिन्नता छू-मन्तर हो गयी, उसका विश्वास लौट आया। किन्तु उसके जाते ही पिशाच ने पुनः उसकी आत्मा को घर दबाया और जब वह दिल्ली मे सुधा से मिला तो उसका व्यवहार बडा रूखा हो उठा। उसके इस व्यवहार से अत्यधिक पीडित हो जब सुधा ने एक दिन एकान्त पाकर अपनी व्यथा निवेदित की तो निराशा मे टूटे हुए चन्दर का पशु अपने नग्न रूप मे प्रकट हुआ। सुधा

---

१ 'गुनाहो का देवता', दसवा स०, पृष्ठ २३८

मर्माहत–सी होकर बोली—"चन्दर, मै किसी की पत्नी हूँ, यह जन्म उसका है। यह माग का सिन्दूर उसका है। मुझे गला घोटकर मार डालो। मैंने तुम्हे बहुत तकलीफ दी है। लेकिन—"

'लेकिन ··' चन्दर हंसा और सुधा को छोड दिया। "मैं तुम्हे स्नेह करती हूँ, लेकिन यह जन्म उनका है। यह शरीर उनका है, ह ! हः ! क्या-क्या अन्दाज हैं प्रवचना के ! जाओ सुधा—मैं तुमसे मजाक कर रहा था। तुम्हारे इस झूठे तन मे रखा ही क्या है?"[1] सुधा हटकर अलग खडी हो गयी। उसकी आंख से चिनगारिया झरने लगी—"चन्दर, तुम जानवर हो गए हो, मैं आज कितनी शर्मिन्दा हूँ, इसमे मेरा कसूर है चन्दर ! मैं अपने को दण्ड दूगी चन्दर, मैं मर जाऊगी—लेकिन तुम्हे इन्सान बनना पडेगा चन्दर।" और सुधा ने अपना सर टूटे खम्भे पर पटक दिया।[2]

अपनी देव-प्रतिमा को इस प्रकार पतित होते देख सचमुच ही सुधा ने मृत्यु का व्रत लिया। पूजन, भजन और व्रत का सहारा ले वह एक ओर तो अपने मन को शान्ति, विश्वास और पवित्रता से आलोकित करने लगी और दूसरी ओर शरीर को घुलाने लगी। वह सूख-सूख कर काटा होती गयी। इसी बीच उसे नारी-जीवन के दण्ड-स्वरूप गर्भ भी रह गया और उसका स्वास्थ्य बिगड़ता ही गया। चन्दर के मन ने स्वय ही उसे धिक्कारा और धीरे-धीरे उसका विश्वास भी लौटने लगा। कैलाश रीवा जाते हुए सुधा के साथ प्रयाग आया और उसे एक दिन के लिए चन्दर के पास छोडकर चला गया। चन्दर ने पाया कि विवाह हो जाने पर भी सुधा मन से पूर्ववत् उसी की है, उसका प्यार वेदना मे और भी निखर उठा है। उसके मन की ग्रन्थि खुल गयी और उसने अपने गुनाहो तथा उसके कारणो को उसके सामने खोलकर रख दिया और बोला, 'तुम जो रास्ता बताओ, मे अपनाने के लिए तैयार हूँ। मै सोचता हूँ अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठू लेकिन मेरे साथ एक शर्त है, तुम्हारा प्यार मेरे साथ रहे।" "तो वह अलग कब रहा चन्दर। तुम्ही ने जब चाहा मु ह फेर लिया, लेकिन अब नही–काश, तुम एक क्षण को भी अनुभव कर पाते कि तुमसे दूर वहाँ वासना के कीचड मे फसी हुई मैं कितनी व्याकुल, कितनी व्यथित हूँ, तो तुम ऐसा कभी न करते। मेरे जीवन मे तो कुछ अपूर्णता रह गयी है चन्दर, उसकी पूर्णता, उसकी सिद्धि तुम्ही हो। तुम्हे मेरे जन्म-जन्मान्तर की शान्ति की सौगन्ध है तुम अब इस तरह न करना ...।"[3] और दोनो का मन पुन. उत्फुल्ल

---

१. 'गुनाहो का देवता', दसवा स०, पृष्ठ ३१३
२. वही पृष्ठ
३. 'गुनाहो का देवता', दसवा स०, पृष्ठ ३५१

हो उठा। किन्तु कौन जनता था कि सुधा का जीवन-दीपक जल-जल कर क्षीण हो चुका है। उसके जाने के कुछ ही दिनो बाद जब डाक्टर शुक्ला का तार पाकर वह दिल्ली पहुँचा तो उसके प्यार की अमूल्य प्रतिमा अन्तिम सासें गिन रही थी। मरणासन्न सुधा की बेहोशी मे निकले उसके एक-एक शब्द उसकी मर्मान्तिक कथा के सूचक है। प्रेम की पीडा एव महत्ता उसमे साकार हो उठी है।

इन दो प्रधान पात्रो के अतिरिक्त अन्य पात्र भी बडे प्रभाव-पूर्ण है। मा की गालियो को मूक भाव से सहन करने वाली, गांव मे पली बिनती की सूझ-बूझ, सुधा के प्रति उसके अत्यधिक स्नेह, चन्दर के लिए पूज्य प्रेमानुराग के साथ-साथ उसके चुलबुलेपन आदि के चित्रण मे पर्याप्त सहजता एव सरसता है। प्रेम एव जीवन के कटु अनुभवो से आहत, अतृप्त प्रेम-वासना का शिकार पम्मी का चरित्र भी बहुत मार्मिक है। प्रेमिका द्वारा प्रवंचित उसके भाई बर्टी के असगत प्रलापो मे भी हृदय की वेदना पूरी तरह उभर आयी है। दिन-रात अपनी लडकी को कोसने, गाली देने वाली सुधा की बुआ का चित्र भी एक वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करता है। इस उपन्यास के पात्रो के चित्रण की विशेषता यह है कि किसी न किसी रूप मे सभी को पाठक के हृदय की सहानुभूति मिली है।

उपन्यास मे प्रेम के उदात्त रूप का चित्रण है। इस कथा से यह सहज ही ध्वनित होता है कि प्रेम वही सार्थक है जिससे व्यक्ति के विकास को सहायता मिले। उसका देवत्व जाग्रत हो जो समाज की उपेक्षा करके नितान्त ऐकान्तिक न हो उठे, वरन् समाज के कल्याण मे उसका योग हो। जो प्रेम मनुष्य की शक्ति न बनकर उसकी दुर्बलता बने और देवत्व की ओर न ले जाकर पशुता की ओर ले जाए, उसमे कही कोई कमी है, दुर्बलता है। इसी दुर्बलता के प्रायश्चित्त का वर्णन करते हुए सुधा ने कहा था, 'दुर्बलता-चन्दर तुम्हे ध्यान होगा, एक दिन हम लोगो ने निश्चय किया था कि हमारे प्यार की कसौटी यह रहेगी कि दूर रहकर भी हम लोग ऊचे उठेंगे, पवित्र रहेगे। दूर हो जाने के बाद चन्दर, तुम्हारा ध्यान तो मुझमे एक दृढ आस्था और विश्वास भरता रहा, उसी के सहारे मैं अपने जीवन को तूफानो से पार कर ले गयी, लेकिन पता नही मेरे प्यार मे कौन सी दुर्बलता रही कि तुम उसे ग्रहण नही कर पाए' ''' 'मैं तुमसे कुछ नही कहती। मगर अपने मन मे कितनी कुण्ठित हूँ कि कह नही सकती" '''।[१] सुधा ने अपने जीवन को होम करके चन्दर के मन की अशान्ति को, पाप को, दुर्बलता को मिटा दिया।

उपन्यास की कथन-शैली अत्यन्त रोचक, रमणीय एव प्रवाह अनवरुद्ध है। पुस्तक पढने के उपरान्त पाठक एक बडी ही कोमल, करुण अनुभूति से रससिक्त

---

१. 'गुनाहो का देवता', दसवा स०, पृष्ठ ३३५

हो उठता है। पुस्तक की भाषा रूमानी, चित्रात्मक, इन्द्र-धनुषी और फूलो से सजी हुई है। रूप-वर्णन मे बडी कोमल कल्पनाए हैं। सवाद बडे सरस, प्रभविष्णु एव भावाभिव्यंजना मे समर्थ है।

**सूरज का सातवां घोड़ा**

यह नयी शैली मे लिखा गया एक छोटा सा उपन्यास है। इसकी नयी शैली इसके अत्याधुनिक होने मे नही है, परन्तु पुरानी कथा-शैली के नवीन विन्यासीकरण मे है। मुल्ला सात दोपहरो मे कथा कहते हैं। सात दोपहरो तक चलने वाला यह क्रम बहुत कुछ धार्मिक पाठ-चक्रो के समान है जिनमे किसी सन्त के वचन या धर्म-ग्रन्थ का एक सप्ताह तक प्रणयन होता है और रोज प्रसाद बटता है। उसी प्रकार माणिक ने प्रतिदिन लोगो को एक कहानी सुनायी, अन्त मे निष्कर्ष बाटा (यद्यपि इसमे आशिक सत्य था क्योकि कई कहानियो मे उन्होने निष्कर्ष बतलाया ही नही)। माणिक के कथा-चक्र मे सात दिन की सख्या रखने का कारण भी शायद बहुत कुछ सूरज के सात घोडो पर आधारित था।

वास्तव मे पुरानी धर्मकथा-शैली को नए यथार्थ से जोडकर उसे नवीन रूप दिया गया है। यह कथा बहुत आत्मीय, खुले वातावरण मे व्यग्य-विनोद तथा कभी-कभी श्रोताओ की टिप्पणियो से जुडकर सहज भाव से बहती है, वह धर्म-कथाओ के आतक-पूर्ण, गम्भीर वातावरण से मुक्त है। दूसरे ये सात दिनो मे अलग-अलग कही जाकर भी सात कहानिया नही है बल्कि सात कहानियो की एक कहानी है, अर्थात् एक उपन्यास है। धर्म-कथा की यह शैली क्यों अपनायी गयी, यह भी एक प्रश्न उठता है। पहली बात तो यह है कि इस प्रकार की स्वीकृति-अस्वीकृति मे लेखको की रुचि काम करती है। भारती प्रकृति से पौराणिक प्रतीको और ऐतिहासिक सन्दर्भों को पसन्द करते है, उन्होने आज के यथार्थ के सन्दर्भ मे उमका बहुत प्रयोग किया है। जहा तक इस कृति का सम्बन्ध है, कहा जा सकता है कि लेखक की प्रकृति के साथ साथ इस कृति की भी प्रकृति इस प्रकार की शैली की उत्तरदायी बन गयी है। इस लोक-जीवन के यथार्थ तथा अपने विचारो को व्यक्त करने के लिए लेखक ने सूरज के घोडो के पौराणिक प्रतीको तथा धर्म-कथा-वाचन की शैली को अपनाया है क्योकि यह लोक-जीवन की बहुत सुपरिचित और सहज प्रवाही शैली है तथा इस शैली से सूरज के घोडो का प्रतीक अधिक सहजता से अभिव्यक्ति पाता हुआ दीखता है। यह सहज कथा अनायास नही है—लेखक के लिए अभिप्रेत है यानि वह जान-बूझकर इस सीधी-सादी शैली को अपनाए हुए है। तभी तो प्रकाश मुल्ला से पूछता है, "लेकिन मुल्ला भाई, एक बात मैं कहूँगा। ये जो कहानिया तुम कहते हो बिलकुल सीधे-सादे विवरण की भाति होती है। उनमे कुछ कथा-शिल्प, कुछ काट-छाट, कुछ

लेखक ने निम्न मध्यवर्ग के इस अप्रीतिकर टूटे हुए विशृ खलित जीवन का सही चित्र उपस्थित किया है। सूरज का रथ सदा आगे बढ रहा है किन्तु उसके छः घोडे काफी क्षत-विक्षत हो गए है। केवल एक घोडा-सातवा घोड़ा ऐसा है, जिसके पख अब भी साबित हैं। वह घोडा है—भविष्य का घोडा, तन्ना, जमुना और सत्ती के निरुपाय बच्चो का घोडा, जिनकी ज़िन्दगी हमारी ज़िन्दगी से अधिक अमन-चैन की होगी। वही सातवा घोडा हमारी पलको मे भविष्य के सपने और वर्त्तमान के नवीन आकलन भेजता है।

इस प्रकार अन्धकार से भरे समाज के भविष्य के प्रति लेखक की अटूट आस्था है। यदि आप अति-यथार्थवादी विश्वासो के हैं तो इसे रूमानी प्रवृत्ति भी कह सकते है।

लेखक के ही शब्दो मे प्रस्तुत कृति 'एक नवीन कथा-प्रयोग', 'एक नए ढग का लघु उपन्यास' है। इसका नयापन इस बात मे है कि कहानी का ढग बहुत पुराना है, अलिफ लैला वाला ढग, पचतन्त्र वाला ढग, बोकेच्छियो वाला ढग जिसमे रोज किस्सागोई की मजलिस जुटती है, फिर कहानी मे से कहानी निकलती है। किन्तु भारती ने यह ढाचा इसलिए अपनाया कि वे बात को सीधे और खुले ढग से कह सकें। यह प्रयत्न केवल फुरसत का वक्त काटने या दिल बहलाने वाला नहीं है, हृदय को कचोटने, बुद्धि को झजोड कर रख देने वाला है। भारती के अनुसार "बहुत छोटे से चौखटे मे काफी लम्बा घटना-क्रम और काफी विस्तृत क्षेत्र का चित्रण करने की विवशता के कारण यह ढग अपनाया गया है।"[1]

प्रारम्भिक उपोद्घात मे घटनाओ के द्रष्टा एव वक्ता माणिक मुल्ला का परिचय दिया गया है। माणिक मुल्ला मुहल्ले के प्रसिद्ध व्यक्ति थे और पूरे घर मे अकेले रहते थे। वही दुपहर मुहल्ले के लडको का अड्डा जमता था जिनके लिए 'पहली-दोपहर' की बैठक मे माणिक ने जो कहानी सुनायी उसका शीर्षक है 'नमक की अदायगी'—अर्थात् जमुना का नमक माणिक ने कैसे अदा किया। इसमे बीस वर्षीया जमुना का पन्द्रह वर्ष के माणिक को नमकीन पुए खिलाकर अपने पास बुलाने तथा बातचीत करने का वर्णन है। 'दूसरी दोपहर' माणिक ने जो कहानी कही, उसका शीर्षक था—'घोडे की नाल' अर्थात् किस प्रकार घोडे की नाल सौभाग्य का लक्षण सिद्ध हुई? इसमे एक वृद्ध किन्तु सम्पन्न पति से जमुना के विवाह, उसकी ऊपरी पतिनिष्ठा तथा पूजा-पाठ तथा रामधन तागे वाले के साथ गुप्त सम्बन्ध एव पुत्र-प्राप्ति, पति की मृत्यु, यमुना का रोना-धोना, तथा अन्त मे वैधव्य-वेश, रामधन का कोठी मे रहने लगना तथा रामधन के ठाट-बाट का वर्णन है।

---

१ 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ ७

'तीसरी दोपहर' को जो कहानी कही गयी उसका शीर्षक 'माणिक मुल्ला ने बताया नहीं'। इसमे जमुना के प्रिय साथी तन्ना, जिसके साथ वह विवाह की सुखद कल्पनाए किया करती थी और जिससे बात करने में उसे बड़ा आनन्द मिलता था— के दु ख द जीवन की कहानी कही गयी है। किस प्रकार तन्ना के पिता महेसर दलाल ने पत्नी की मृत्यु के बाद एक रखैल रख ली और उसके प्रभाव से लडके-लडकियो पर शासन कितना कठोर हो गया, भूखे रहकर, मार खाकर तन्ना किस प्रकार यमुना की सहानुभूति से अपना दु.ख भुलाते, किस प्रकार दोनो के विवाह की बात टूट गयी और तन्ना का विवाह एक इन्टर पास लडकी लीला से हो गया। महेसर दलाल पुलिस से बचने के लिए भाग गया और किस प्रकार सारा गृहस्थी का भार आर० एम० एस० के एक साधारण क्लर्क तन्ना पर पड गया। बेचारे सूख कर काटा हो गये, बीमार पड गये और नौकरी से भी बर्खास्त हो गये तो तन्ना की सास उनकी स्त्री को आकर लिवा ले गयी। बाद मे जब यूनियन वालो के प्रयत्न से फिर नौकरी लगी तो एक बार ककाल-शेष तन्ना टकी की झूलती हुई बाल्टी से टकरा कर ट्रेन से गिर गये। उनकी दोनो टागें कट गयी और अस्पताल मे उनकी मृत्यु हो गयी।

चौथी दोपहर' मे माणिक ने जो कहानी सुनायी, उसका शीर्षक था— 'मालवा की युवरानी देवसेना की कहानी।' इसमे माणिक और लीला के इन्द्रधनुषी रूमानी प्रेम तथा तन्ना के साथ लीला के विवाह के कारण का वर्णन है।

'पाचवी दोपहर' मे माणिक ने 'काले बैंत -का चाकू' नामक कहानी सुनायी। इसमे पहिया छाप साबुन के मालिक चमन ठाकुर (जो जाति का नाई और फौज का पैंशन-याफ्ता था) की पोषिता कन्या सत्ती के साथ माणिक की घनिष्टता का वर्णन है। सत्ती माणिक को अत्यधिक प्यार करने लगी थी और चमन ठाकुर तथा महेसर दलाल की काम-लोलुपता से बचने के लिए एक रात अपना सब कुछ लेकर माणिक के घर चली आई किन्तु मर्यादा-भीरु माणिक ने भाई को खबर दी जिसने सत्ती को चमन के हवाले कर दिया। लोगो का कहना था कि चमन और महेसर दलाल ने मिलकर रात को सत्ती का गला घोट दिया था।

'छठी दोपहर' को यही कहानी आगे चलती है। सत्ती की मृत्यु के अनुमान से माणिक बेहद व्यथित हुए। उनका स्वास्थ्य बुरी तरह गिर गया और उनका स्वभाव बहुत असामाजिक, उच्छृ खल और आत्मघाती हो गया। एक दिन जब वे चाय-घर से निकल रहे थे तो उन्होने देखा कि एक लकडी की गाडी मे चमन ठाकुर बैठा था और सत्ती गोद मे एक भिनकता बच्चा लिये, गाडी खीचते, चली आ रही थी। माणिक को देखते ही सत्ती का हाथ कमर पर गया, शायद चाकू की तलाश मे पर चाकू न पाकर उसने फिर प्याला उठाया और फिर खून की प्यासी

दृष्टि से माणिक को देखते हुए आगे बढ गयी। सत्ती को जीवित देखकर माणिक के हृदय का बोझ उतर गया और उन्होने तन्ना के रिक्त स्थान पर आर० एम० एस० मे नौकरी कर ली।

'सातवी दोपहर' की जो कहानी माणिक ने सुनायी, उसका शीर्षक था : 'सूरज का सातवा घोडा' अर्थात् वह जो सपने भेजता है। इसमे माणिक ने सूरज के सात घोडो का तात्पर्य स्पष्ट किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि अनेक दोपहरियो को माणिक ने भिन्न भिन्न कहानिया कही किन्तु सबमे एकसूत्रता है। प्राय. ये सभी कहानिया माणिक मुल्ला के व्यक्तित्व से जुडी हुई हैं। आर्थिक विषमता, अतृप्त वासना एव प्रेम की विभिन्न समस्याओ को चित्रित करने का प्रयत्न किया गया है। प्रत्येक कहानी के वाद अनध्याय या विराम है, जिसमे सन्ध्या-समय लडके दोपहर मे सुनी हुई माणिक मुल्ला की कहानी पर अपने मत व्यक्त करते है। यही पर लेखक ने समस्या के वास्तविक रूप को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। पहली दोपहर को जमुना की कहानी सुनने पर जब शाम को सोते समय चबूतरे पर उसकी चर्चा हुई तो श्याम रुंधे गले से वोला—"नही, मै जमना को नही जानता, लेकिन आज नब्वे प्रतिशत लडकियां जमना की परिस्थिति मे है। वे वेचारी क्या करें ? तन्ना से उसकी शादी नही हो पायी, उसके बाप दहेज जुटा नही पाये, शिक्षा और मन-बहलाव के नाम पर उसे मिली 'मीठी कहानिया', 'सच्ची कहानिया' तो वेचारी और कर ही क्या सकती थी—?"[१] दूसरे दिन जमुना और रामधन के गुप्त सम्बन्ध की चर्चा सब जगह फैल गई। जमुना निम्न मध्यम वर्ग की एक भयानक समस्या है। आर्थिक नीव खोखली है। उसकी वजह से विवाह, परिवार, प्रेम सभी नीवें हिल गयी है, अनैतिकता छाई हुई है। पर सब ओर से आखें मू दे हैं। असल मे पूरी ज़िन्दगी की व्यवस्था बदलनी होगी। तन्ना के दुखद अन्त वाली कहानी के उपरान्त 'अनध्याय' के अन्तर्गत लेखक के अर्द्धसुप्त मन मे उठे असम्बद्ध स्वप्न-विचारो का वर्णन है जिसमे यमुना, रामधन, घोडे की नाल, तन्ना, उसके कटे पाव, टागो पर आर० एम० एस० के रजिस्टर, तन्ना का रोता हुआ बच्चा आदि विभिन्न भूमिकाओ मे आते-जाते रहते है। माणिक और लीला के असफल रूमानी प्रेम की कथा के उपरान्त 'अनध्याय' के अन्तर्गत माणिक के असम्बद्ध स्वप्न का वर्णन है जिसमे यमुना, तन्ना, सत्ती के बच्चो का, तन्ना के कटे पैरो के नीचे कुचले जाने तथा माताओ के सिसकने आदि के दृश्य हैं।

---

१. 'सूरज का सातवा घोडा, प्रथम सं०, पृष्ठ २७-२८

सूरज के सातवें घोडे का अर्थ स्पष्ट करते हुए मुल्ला ने बताया—"देखो, ये कहानिया वास्तव मे प्रेम नही, वरन् उस जिन्दगी का वर्णन करती हैं जिसमे आज का निम्न मध्य वर्ग जी रहा है। उसमे प्रेम से कही ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है आज का आर्थिक सघर्ष, नैतिक विश्रृंखलता और इसीलिए इतना अनाचार, निराशा, कटुता और अन्धेरा मध्यवर्ग पर छा गया है। पर कोई न कोई ऐसी चीज है जिसने हमे अ धेरा चीर कर आगे बढने, समाज-व्यवस्था को बदलने और मानवता के सहज मूल्यो को पुन स्थापित करने की प्रेरणा और ताकत दी है, चाहे उसे आत्मा कह डालें चाहे कुछ और। विश्वास, साहस, सत्य के प्रति निष्ठा उस प्रकाश-वाही आत्मा को उसी तरह आगे ले चलते हैं जैसे सात घोडे सूर्य को आगे बढा ले चलते हैं।"[1] हमारे जीवन मे अनेक बुराइया आ गयी हैं किन्तु अब भी जीवन के प्रति आदिम आस्था बनी हुई है। यह अडिग आस्था ही सूरज का सातवा घोडा है जो हमारी पलको मे भविष्य के सपने और वर्त्तमान के नवीन आकलन भेजता है ताकि हम वह रास्ता बना सकें जिस पर होकर भविष्य का घोडा आएगा।

यह उपन्यास प्रधानतया सामाजिक विकृतियो को दृष्टि मे रखकर लिखा गया है और कुछ बडी ही विषम जीवन-परिस्थितियो को उनके यथार्थ परिवेश मे विभिन्न दृष्टि-बिन्दुओ से देखने का प्रयत्न है। इसमे वर्णित अधिकाश प्रसग दु खान्त हैं क्योकि आज का आर्थिक, सामाजिक ढाचा ही ऐसा है कि मनुष्य अपने मनोनुकूल अपनी जीवन-गति का सचालन नही कर पाता। सामाजिक एव आर्थिक कारणो से ही जमुना अपने प्रथम-प्रेम की कल्पना-मूर्ति तन्ना से न ब्याही जाकर एक बूढे से ब्याह दी जाती है जहा वह पति को, समाज को, एव स्वय अपने को धोखा देकर रामधन के द्वारा अपनी वासना-तृप्ति करती है। पढी-लिखी सम्पन्न परिवार की लीला प्यार करती है माणिक को किन्तु सामाजिक निषेधो के कारण ब्याह दी जाती है तन्ना से। तन्ना और सत्ती का जीवन भी आर्थिक-सघर्षो एव सामाजिक विकृतियो के बीच नष्ट हो जाता है। वास्तव मे आर्थिक ढाचा हमारे मन पर इतना अजब-सा प्रभाव डालता है कि मन की सारी भावनाए उससे स्वाधीन नही हो पाती और हम जैसे लोग जो न उच्च वर्ग के हैं और न निम्न वर्ग के, उनके यहा रूढिया, परम्पराए, मर्यादाएं भी ऐसी पुरानी और विषाक्त हैं कि कुल मिलाकर हम सभी पर ऐसा प्रभाव पडता है कि हम यन्त्र-मात्र रह जाते हैं। हमारे अन्दर उदार और ऊचे सपने सत्य हो जाते हैं और एक अजीब-सी जड-मूर्च्छना हम पर छा जाती है।

जहा तक इस उपन्यास की टेकनीक का प्रश्न है, यह सचमुच हिन्दी-उपन्यास क्षेत्र मे अकेला है। काल्पनिक कथाकार माणिक मुल्ला को इस रूप मे चित्रित किया

---

१ 'सूरज का सातवा घोडा,' प्रथम स०, पृष्ठ ११३–१४

गया है कि उनके जीवन से सम्बन्धित इन कहानियो में यथार्थ का भ्रम उत्पन्न करने की पूरी क्षमता आ गयी है। कुल ११५ पृष्ठो मे, सात दिन के भीतर अनेक वर्षों तथा अनेक जीवन-प्रसगो को इस कौशल से चित्रित किया गया है कि प्रत्येक प्रसग तो अपने आप मे पूर्ण है ही, सब एक-दूसरे से भी सम्बद्ध होकर एकान्विति भी प्रदान करते हैं। प्रत्येक कहानी का शीर्षक अजीब एव आकर्षक है और मूल कथा को बडी होशियारी से इस शीर्षक के अन्दर लाने का प्रयत्न किया गया है। एक ही सामाजिक चित्र को अनेक दृष्टिकोणो से निभाने का कौशल भी निराला है। माणिक मुल्ला के यहा महफिलो चहल-पहल, उनके कहानी कहने के नितान्त अनौपचारिक ढग, अन्त के मनोरजक निष्कर्ष, समाज एव व्यक्ति के व्यग्य-विद्रूप तथा हास्य गर्भित चित्र और सबके अन्तर मे व्याप्त मानव-दु.ख एव दमनीयता के प्रति हृदय को कचोटने वाली वेदना आदि ने मिलकर इस उपन्यास को विशिष्टता दे दी है।

## ग्यारह सपनों का देश

'ग्यारह सपनों का देश' दस लेखको द्वारा समन्वित रूप से लिखा गया एक प्रयोग है जिसकी पहली कडी धर्मवीर भारती हैं। यह भारती का तीसरा और फिलहाल अन्तिम उपन्यास है। इसके लेखक इस प्रकार हैं.—

धर्मवीर भारती
उदयशकर भट्ट
रागेय राघव
अमृतलाल नागर
इलाचन्द्र जोशी
राजेन्द्र यादव
मुद्राराक्षस
लक्ष्मीचन्द्र जैन
प्रभाकर माचवे, और
कृष्णा सोबती

इस उपन्याम का सम्पादन लक्ष्मीचन्द्र जैन ने किया है। यह भारतीय ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित है और इसका मूल्य है, चार रुपये।

उपन्यास के पहले लेखक, अथवा कहे कि भारती उपन्यास के 'की स्टोन' हैं। अपने पहले अध्याय का नाम भारती ने 'आदिम अग्नि और अनिश्चय की घाटिया' रखा है। भारती का अध्याय अठारह पृष्ठ का है।

पहले अध्याय मे ही भारती ने पात्रो की नीव, उनका स्वभाव तथा सामाजिक सीमाए निर्धारित करदी हैं। भारती की बनाई नीव पर हर लेखक चले यह कोई आवश्यक नही और इसी का परिणाम है कि अन्य लेखको ने पात्रो को अपनी इच्छानुसार उछाला-कुदाया है और पात्रो को उछलते, कूदते छोड हर लेखक मौन हो गया है और पात्र अनजानी पगडडियो पर भटकते रहे हैं। हर लेखक ने वाजीगर वनकर पात्रो को नचाया है, इस स्थिति मे लेखको का यह कहना कि इस लेखक ने उपन्यास की हत्या कर दी है अथवा यहा अमुक लेखक चली आती हुई विचारधारा को नही पहचान पाया है, अधिक उपयुक्त नही है। फिर यह कत्तई ज़रूरी नही कि एक आदमी को जो सपना आये और जहा से टूटे, वही से दूसरे लेखक का सपना शुरू हो। दूसरा सपना यदि विल्कुल दूसरी भाव-भूमि पर आधारित है तो इसमे आश्चर्य की कोई वात नही। सपने तो तारतम्यहीन ही हुआ करते है।

ग्यारह सपनो का देश दस लोगो का सपना है जो सचमुच सपना वन कर रह गया है, उपन्यास नही वन पाया है और उपन्यास वनना सभव भी कैसे था? दस सपनो से भला एक उपन्यास की सृष्टि कैसे सभव है? कोई यदि यह चाहे कि पचास खण्ड काव्यों को मिलाकर एक महाकाव्य का निर्माण किया जाय तो यह कैसे सभव हो सकेगा? ठीक इसी तरह उपन्यास मे लेखक की अपनी विचारधारा, उसकी मान्यताओ का होना आवश्यक है। तभी वह कोई वात, विचार अथवा भाव हमे ठोस रूप मे दे पायेगा। उपन्यास को अपनी सीमाए होती हैं। यह वात अलग होती कि एक लेखक उपन्यास को लिखता और अन्य लेखक उस पर टिप्पणी करते तो मूलभाव की छीछालेदार तो नही होती। सभी के मिले-जुले पलस्तरो से यह उपन्यास ग्यारह सपनो की नुमाइश वन गया है।

ठीक इसी प्रकार का एक अन्य प्रयोग 'एक इ च मुस्कान' जो राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी का सयुक्त लेखन है, सफल कहा जा सकता है क्योकि यहां एक की भावना की दूसरे ने छीछालेदार नहीं की है वल्कि उसे उधार के धन की भाति सावधानी से सभाला है।

'ग्यारह सपनो का देश' मे कही कही तो एक से दूसरे अध्याय मे पहुँचते ही लगता है कि हम एक से दूसरी दुनिया मे प्रवेश कर गये है जहा पात्र तो वही हैं पर पात्रो के अलावा सव कुछ अलग है।

पाठक को उपन्यास से अधिक इसका दूसरा भाग—'सहयोगी उपन्यास' रुचता है जहा न कोई सपना है, न पात्र और न कथा। मात्र लेखक हैं और यहा हर लेखक ने यह कोशिश की है कि वह इस बात को स्पष्ट कर सके कि उसके द्वारा

लिखा गया उपन्यास का अ श नि.सदेह उत्कृष्ट है और उपन्यास की गडबडी मे वह सहभागी नही है।

खैर, जैसा भी हो, भारती द्वारा निर्मित पात्र उपयुक्त और पर्याप्त थे जिन पर अधिक अच्छे सपने रचे जा सकते थे। इन ग्यारह सपनो मे भारती का सपना निःसदेह कोमल है। रोमेन्टिक धरातल पर हिरण सी छलागें लगाते हुए और सागर की लहरो से हिलमिल कर चलते हुए पात्रो को भारती ने जन्म दिया है और इन पात्रो को आगे के लेखको ने मनमाने ढग से पाला-पोसा और बडा किया है।

# 4 भारती के उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन

प्रेमचन्द-काल के उपन्यासो मे पात्र वर्ग-विशेष का प्रतिनिधित्व करते थे पर साम्प्रतिक उपन्यासो के पात्र वर्ग नही, व्यक्ति हैं। आज के उपन्यासो के पात्र अपनी समस्त व्यक्तिगत विशेषताओ के साथ अवतरित होते हैं। हिन्दी उपन्यास पर सभवत यह पाश्चात्य उपन्यास का प्रभाव है। भारती के उपन्यासो मे भी हमे ऐसे ही पात्रो का आधिक्य मिलता है। साथ ही उनमे चरित्राकन का रूप-वैविध्य भी देखने को मिल जाता है। चन्दर और सुधा आदर्श मे विश्वास रख कर एक दूसरे के प्रेम को पूजते हैं तो पम्मी और बर्टी का चरित्र शुद्ध यथार्थ की भूमि पर उतरा है। गेसू शायराना अन्दाज रखती है तो विनती आचलिकता मे पली है। इधर माणिक कहानी-वक्ता भी है और नायक भी। हर चरित्र का अपना परिवेश है। उचित होगा कि अब भारती के विविध पात्रो को उनके निजी परिवेश मे देखा जाय।

## प्रमुख पात्र

### चन्दर

धर्मवीर भारती ने दो उपन्यासो की रचना की है—'गुनाहो का देवता' और 'सूरज का सातवा घोडा'। 'गुनाहो का देवता' व्यक्तित्व के विरोधाभास के यथार्थ पर आधारित है और 'सूरज का सातवा घोडा' टेकनीक की दृष्टि से विशिष्ट प्रयोग है। यहा भारती के पात्रो पर विचार करें जो हिन्दी कथा-साहित्य मे भारती की विशिष्ट देन माने जा सकते हैं।

भारत के हर पात्र के आयाम अपने और अलग हैं—चन्दर उस भाव-लोक का प्राणी है जहा वह सुधा का निश्छल विश्वास और सहज स्नेह पा कर अपने आप को पूर्ण महसूस करता है, सुधा उसकी अपनी है जिसके नाम पर वह गर्व करता है। चन्दर के जीवन मे सुधा के स्नेह की झिडकिया, झगडे और विवशताए जुडी हुई हैं। सुधा चन्दर का एक सुनहरा सपना है जिसे चन्दर ने अपने हृदय की अन्तरग परतो मे सवार कर रखा है। वह बेहद भावुक इन्सान है, उसके हृदय को शब्दो मे बाध पाना नितान्त कठिन है, चन्दर के हृदय से आनद का स्रोत सा बहता है जिसमे

पाठक के मन के विचार, संशय इत्यादि सब धुल जाते है और पाठक अपने आप को चन्दर महसूस करता हुआ सोचता है :

"शायद इसी का नाम मुहब्बत है शेफत
एक आग सी मेरे दिल मे है लगी हुई ।"

चन्दर सुधा को सुधा के लिए नही, प्रेम के लिए पूजता है। वह सुधा के प्रेम मे मूर्त्ति बन जाता है,—मूर्त्ति जिसकी आखे सदा किसी एक ही अदृश्य को ताकती रहती हैं। चन्दर का मन कुतुबनुमा है जिसे जीवन मे चाहे जितने झटके, दुख और पीडाए मिली हो, पर कुतुबनुमे की सुई के समान उसका मन प्रेम के उन उन्मुक्त शिखरो पर ही डोलता है जिसका अहसास सिर्फ चन्दर को है।

विवाह के बाद भी सुधा चन्दर के जीवन से दूर नही हो पाती। उसके लिए सुधा का ध्यान वियोग की बहुत बडी सात्वना बन गया है। सुधा दूर है फिर भी चन्दर की दृष्टि उसे दूर नही देखती, नेत्र पतगो के समान उसके आसपास मडराते हैं, अन्तर सिर्फ इतना है कि सुधा पहले उसके निकट थी, अब हृदय की भीतरी पर्तों मे है।

बिहारी की नायिका के जिस्म से चिपके गीले कपडे की भाति चन्दर सुधा के ध्यान से ही चिपका रहता है, यहा तक कि उस ध्यान के पीछे उसे स्वय का भी ध्यान नही है।

इसके अतिरिक्त चन्दर के जीवन को और लडकियो ने भी छुआ है। प्रमिला डिक्रूज उसकी मित्र है, पर उसके और सुधा के आयाम बिल्कुल विपरीत हैं। प्रमिला के लिए कही पढी गई ये पक्तिया मुझे सहसा याद आती हैं :

"हर एक प्यार करने वाली लडकी
प्रेमिका नही होती,
क्योकि हर वह जगह, जहा हम—
कपडे बदलते, नहाते-धोते, खाते-पीते हैं,
घर नही होता।"

चन्दर का आन्तरिक स्नेह सिर्फ सुधा के साथ है। प्रमिला तो उसके लिए एक साधन मात्र है, मित्रता के बहाने समय गुजारने का। वह सुधा से प्रेम नही करता अपितु सुधा उसकी सब से बडी अभिलाषा है जिसे वह तन, मन, धन और आत्मा से चाहता है। कहते हैं आत्मा की आवाज सच्ची होती है, इसीलिए तो वह अपना भी न रहकर सुधा का बन गया है। सुधा का प्यार उसके लिए धूप-छाव है—जो उसे कभी हँसाता है, कभी रुलाता है और कभी हाथ मे आ आ कर फिसलता

चला जाता है। चन्दर का प्यार कही भी स्वार्थ के आधीन नही है। सुधा जब दो दिन के लिए वापस आती है, तो चन्दर उससे माफी मागता है और उसे अहसास होता है कि सुधा उसके चरित्र के लिए कितना आवश्यक व्यक्तित्व रखती है। चन्दर के नि स्वार्थ प्रेम मे पाप और पुण्य का भी झगडा नही है। इसीलिए एक स्थान पर सुधा कहती है

'मेरे विना तुम केवल शरीर रह जाते हो।'

वैसे पुरुष की वेवफाई के प्रति नारी की शिकायत का इतिहास वहुत पुराना है पर चन्दर पुरुषो के इस इतिहास मे नही आता। वह अपना इतिहास दुनिया से अलग रखता है, और यह वात सुधा पूरे विश्वास के साथ कह सकता है कि— वह वेवफा नही है, कम से कम प्यार के नाम पर वह एक उत्कृष्ट प्राणी है।

यह कहा जाना कि चन्दर नावालिगो के लिए देवता है जिनका मानस अभी भावुकता के कोमलपन तक सिमटा हुआ है। भावुकता की नज़रें चन्दर मे कोई दोष नही ढूढ पाती, पर सतही दृष्टि से देखें तो यह प्रश्न वन जाता है कि क्या चन्दर देवता है? और नही है तो क्यो? पूरा उपन्यास चन्दर के इर्द-गिर्द घूमता है, चन्दर उपन्यास की धुरी है और इसी चन्दर को भारती ने 'गुनाहो का देवता' कहा है, लेकिन भारती ने चन्दर को गुनाहो का देवता क्यो कहा? शायद भारती ने चन्दर को नावालिग दृष्टि से देख कर वुद्धि के परिष्कार का परिचय देना चाहा है। हम यदि सामान्य दृष्टि से देखें तो चन्दर सुधा को अपने सम्पूर्ण सर्वस्व से प्यार करता है और सुधा के विवाह के पश्चात् वह प्रमिला डिक्रूज की ओर झुकता चला जाता है। उसका दिमाग अव उसे ही झकझोरने लगा है अत वह देवता न रह कर गुनाहो का देवता वन गया है।

पर क्या पुरुष का नारी के प्रति और नारी का पुरुष के प्रति आकर्षित होना वालिग दृष्टि से भी गुनाह कहा जा सकता है? यदि नही, तो चन्दर ने कोई गुनाह नही किया। यह परस्पर का आकर्षण तो सहज सत्य है और इस सत्य मे मेरी नज़रें कोई गुनाह नही ढूढ पाती और इस सहज सत्य को इन्कार कर पाना भी इतना आसान नही। भारती ने चन्दर को 'गुनाहो का देवता' इसलिए कहा है कि सभवत. चन्दर गुनाह करते हुए भी देवता है।

चन्दर को आज के मशीनी दौर मे भी देखें तो उसके व्यक्तित्व पर कोई आच नही आती। यह वात वडी सहजता से कही जा सकती है कि मशीनी दौर मे भावुकता के समुद्र मे डुवकिया लगाता हुआ चन्दर कोई महत्व नही रखता। वह भावुकता के समुद्र मे ही समा जाता है या वापस वाहर भी निकल पाता है यह वात कतई महत्व नही रखती।

पर जिस दिन आदमी स्वय को पूर्ण रूप से मशीनी जिन्दगी मे ढाल लेगा उस दिन कोई भी वस्तु गुनाह की सीमा से बाहर नही रह जायेगी। चन्दर ने जो हृदय पाया है वह लोहे का नही है उसमे रक्त की उष्णता है, प्यार की सवेदना है और सुधा का स्नेह है जिसे स्नेह की आखो से देखना ही उचित होगा।

भारती का चन्दर नि सदेह बहुत ही 'इम्प्रेसिव करेक्टर' है जिसे पढ कर पाठक के मन मे यह स्वाभाविक इच्छा जन्म लेती है कि वह चन्दर बने।

**सुधा**

सुधा डाक्टर शुक्ला की इकलौती सन्तान है जिसने जीवन के हर आयाम मे स्नेह और सुख पाया है और अपना पूरा सुख और स्नेह चन्दर पर उंडेल दिया है। सुधा और चन्दर मे बडे निश्छल सम्बन्ध है, वह चन्दर का हर कहना मानती है और मन की हर बात चन्दर को कहती है जिस प्रकार आत्म-निवेदन मे भक्त अपने हृदय को खोल कर ईश्वर के सामने रख देता है। वह सचमुच भक्त है और चन्दर उसके लिए ईश्वर। वह चाहे किसी का भी कहना न माने पर चन्दर का कहना उसे मानना ही पडता है। चन्दर के शब्दो मे ऐसा क्या चमत्कार है, इसे सुधा स्वय भी नही जानती। इसका क्या कारण है, ऐसा क्यो होता है और कब से होने लगा है, इन सब से सुधा अपरिचित है।

सुधा का मन चन्दर मे किस प्रकार घुल गया है यह बताया कैसे जाय? इसके प्राणो की वही एक मात्र गति है, बुद्धि, नेत्र और वाणी सब में वही बसा हुआ है। उसका मन चातक की तरह एक मात्र उसी की अभिलाषा रखता है। वह चन्दर के स्नेह मे ही पल कर बडी हुई है और उसका पूरा जीवन भी चन्दर के स्नेह में ही बीता है। उसका भोला और निश्छल मन लोहे से चुम्बक की भाति चन्दर से मिल गया है, वह अपनी आत्मा के रेशे रेशे से चन्दर को प्यार करती है। यह प्रेम बचपन से ही पनप कर धीरे धीरे विकसित हुआ है, और अब इतना दृढ हो गया है कि ईश्वर भी चाहे तो सुधा छोडने को तैयार नही है।

चन्दर उसका अपना है, चन्दर के बिना वह स्वय को भी नही जानती, प्यार जैसी बात भी वह चन्दर से ही पूछती है—"चन्दर हमने कभी किसी से प्यार तो नही किया न?"[1]

सुधा और चन्दर एक सिक्के के दो पहलू हैं। सिक्का एक ही है, फिर भी पहलू दो है। सुधा बस चन्दर की है, जिसके अन्तर्मन मे सिर्फ चन्दर ही चन्दर है। वह विवाह भी चन्दर के कहने पर ही करती है। चन्दर की इच्छा ही ऐसी थी अत. वह

१. "गुनाहो का देवता", दसवा स०, पृष्ठ ७६

कर क्या सकती थी ? विवाह चन्दर का आदेश था जिसका उल्लघन सुधा के वश के बाहर था। विवाह के उपरान्त, चन्दर की याद और विरह मे ऐसा सुख है जो उसे एक सूत्र मे बाधे रखता है। सुधा को विरह के दोनो ही रूप प्रिय हैं, एक वह जो उसके सवेदनशील हृदय को प्रेम के अविच्छिन्न बधन मे बाध देता है और दूसरा वह जो उसके बधन मे पडे हुए चेतन का स्पन्दन है। जिस प्रकार चन्द्रमा को देख कर रात खिल उठती है, ठीक वैसे ही चन्दर को देखते ही सुधा खिल उठती है। चन्दर से मिल कर उसने जीवन-सगीत का राग सीखा है और उससे बिछुड कर याद ही उसके पास रह गई है। चन्दर से बिछुडने के बाद कितनी बार उसके शरीर मे प्राण आये और गए हैं, लगता है इस प्रेम मे अनेक युग व्यतीत हो गए हैं, अनेक बार मोक्ष और फिर जन्म मिला है उसे, और अब सुधा भीड से लदी हुई इस दुनिया मे अपने आप को कितना अकेला महसूस करती है !

सुधा चन्दर के प्रति समर्पित हो गई है, पर इस अर्पण मे भी कितनी मधुरता, स्नेह और औदार्य है। समर्पण जैनेन्द्र के एक उपन्यास "सुनीता" मे भी किया गया है, उसे भी देख लेना अनुचित न होगा। सुनीता हरिप्रसन्न से कहती है।

"हरी, मुझे लो, मुझे पाओ, इस एक आवरण को भी हटाये देती हूँ, वही मुझे ढक रहा है, मुझे चाहते हो न ? मैं इन्कार नही करती, लो —कहती हूँ मैं यह सामने हूँ, मुझे तुम ले सकते हो, समूची को, जिस विधि चाहो ले सकते हो।"[1]

वह चन्दर से दूर अपने आपको अपूर्ण महसूस करती है और जब चन्दर उसके सामने शादी का उलझाव लाकर खडा कर देता है तो उसकी स्थिति ठीक कुमारसभवम् की पार्वती जैसी हो जाती है—मानो वेग से बहती हुई नदी के सामने यकायक कोई विशाल पर्वत आ गया हो, वेग के कारण पानी न तो पीछे लौट पाता है और न पर्वत के कारण आगे बढ सकता है, फलत. उसमे भवर पैदा हो जाते हैं। ठीक यही स्थिति सुधा की होती है। पर इस सब के उपरान्त भी सुधा है अपने चन्दर की ही। वह अपने व्यक्तित्व को चन्दर की आत्मा का एक खण्ड समझती है जो अलग होने पर भी जन्म-जन्मान्तर तक उसके चारो ओर चक्कर लगाता रहेगा।

वह कहती है, "मैं तुम्हारी आत्मा का ही एक टुकडा हूँ, जो एक जन्म के लिए अलग हो गई, लेकिन हमेशा चारो ओर चन्द्रमा की तरह चक्कर लगाती रहूँगी।"[2] एक अन्य स्थान पर वह चन्दर से कहती है—"तुम कहोगे जो ही करूँगी, मृत्यु-शैय्या पर होऊगी तो तुम्हारे आदेश पर हस सकती हूँ।"[3]

---

१ "सुनीता" प्रथम स०, पृष्ठ ११३

२ "गुनाहो का देवता", दसवा स०, पृष्ठ २९४

३ वही, पृष्ठ १३६

सुधा का प्रेम सुधा का प्रेम है जिस पर चन्दर को गर्व होना स्वाभाविक है। चन्दर सुधा की आत्मा है और उसका प्यार प्रेम के उन शिखरो तक पहुँच गया है जहा मृत्यु भी कोई अन्तर उपस्थित नही कर सकती और उसकी अन्तिम सासें भी चन्दर का नाम गिनते गिनते ही चुक जाती हैं। विरह मे छोडी गई उसकी निःश्वासो से आसमान मे छेद नही पडे हैं। सुधा गालिब की शायरी नही है और न बिहारी की नायिका ही जिसे वासना के सिवाय कुछ नजर ही नही आता। यह चन्दर की सुधा है, जिसने प्रेम को पूजा है, वह अपने आपको नही जानती, जानती है सिर्फ एक बात कि वह तो बस—चन्दर की गुणहीन और निर्दोष सुधा है।

सुधा के लिए यह सोचना कि उसमे अतिरिक्त भावुकता है, उसका प्रेम परम्परावादी है, सुधा सस्कारो से जकडी हुई नारी है, उसके प्रेम मे भावुकता और नादानी है, यथार्थ की भूमि पर उसके पाव बहुत गहरे नही पैठे हैं—ठीक हो सकता है, मगर क्या भावुकता और सस्कारो का इन्सान मे न होना जरूरी है ? वह भावुक है क्योंकि भारती उसे रूप ही ऐसा देना चाहते थे, इसमे भला सुधा का क्या दोष ? सुधा हमारे अतीत के सस्कारो को पुन जीवित कर पाने मे समर्थ है, अत यह सब होते हुए भी सुधा का चरित्र 'एडस् टू मेमोरी' है और भला प्रेम जैसी वस्तु मे भावुकता से इन्कार किया भी कैसे जा सकता है ? प्रेम नापने और तौलने की वस्तु नही है, यहाँ महत्व भावना का ही है। यदि हम प्रेम को इतनी सतर्कता से नापेंगे, तोलेंगे, तो उसमे प्रेम नाम की कोई वस्तु शेष नही रह जायेगी। सुधा आलू नही है कि उसे तोला जाय, सुधा कपडा नही है कि उसे नापा जाय और न सुधा दर्शन है कि उस पर तर्क किया जाय। सुधा बस सुधा है जिसमे प्रेम है—प्रेम, जिसमे चित्त की स्थिरता और दृष्टि की एकता का होना नितान्त ज़रूरी है।

सुधा का यह रूप पाठक को अपनी ओर आकर्षित करने मे समर्थ है और सुधा की भावना के साथ पाठक खुद की भावना के घोडे भी दौड़ा देता है और यह दौड समाप्त होने पर पाठक को अहसास होता है कि इस दौड मे उसका घोडा बहुत पीछे है, इतना पीछे कि आगे वाले की झलक तक देख पाने मे असमर्थ है।

बर्टी

चन्दर उपन्यास का मूल चरित्र है और धुरी है, पूरे उपन्यास मे चन्दर का व्यक्तित्व आसमान-सा फैला पडा है। बर्टी एक गौण और सामान्य चरित्र है पर सामान्य होते हुए भी भारती ने उसे वह रग दिया है कि कई बार तो बर्टी के सम्मुख चन्दर तक का चरित्र धुधला उठा है।

बर्टी प्रेम की चोट खाया हुआ प्राणी है और भुक्तभोगी है, पर यह भुक्तभोगी प्रेमचन्द के भुक्तभोगी 'हलकू' से बिल्कुल भिन्न है। बर्टी का व्यक्तित्व इस बात

को सिद्ध कर पाने मे समर्थ है कि प्रेम हल्की-फुल्की फूक से उडा देने वाली वस्तु नही है, वह जीवन के गहनतम क्षणो से समझौता है और वर्टी उन सब नकली प्रेमियो के लिए (जो आह और वाह मे प्रेम ढूढते फिरते हैं) के लिए एक मशक्त व्यग्य है।

वर्टी एक भुक्त प्रेमी है और चन्दर भी एक भुक्त प्रेमी है। वर्टी की प्रेमिका एक सार्जेन्ट के साथ भाग जाती है आर चन्दर की प्रेमिका (सुधा) की भी किसी अन्य (कैलाश) के साथ शादी हो जाती है, दोनो ही प्रेमिका युक्त थे, अब रहित हैं, पर इन दोनो के चरित्रो मे कितना अन्तर है। चन्दर इतना पढा लिखा होने पर भी अपने आपको भूलने के लिए पम्मी से व्यवहार बढ़ाता ही चला जाता है जबकि वर्टी अपने आपको सीमित करता चला जाता है। दोनो के सोचने मे कितना अन्तर है ? हम चन्दर को बेहद भावुक प्राणी मानते हैं (और यह कहते हैं कि आज के मशीनी दौर में इतनी भावुकता ठीक नही) यदि चन्दर के साथ यह स्थिति है तो समझ मे नही आता कि वर्टी को क्या कहे ? चन्दर तो पम्मी से प्यार पनपाकर इस बात से आश्वस्त होना चाहता है कि उसकी आत्मा सुधा के साथ है और वह सुधा के लिए ही है, पम्मी तो अपने आपको भुलाने का एक बहाना है, लेकिन वर्टी के दिमाग मे इस आत्मा का कोई अलग रूप नही हैं। वह चन्दर की तरह परम्परावादी नही हैं और आत्मा की अलग सत्ता मे वर्टी की आस्था नही है और इस सब के लिए उत्तरदायी हैं दोनो पात्रो की सस्कृतिया। वर्टी क्रिश्चियन है और इसी कारण दृष्टि का यह अन्तर है।

उसकी प्रेमिका के भाग जाने के बाद वर्टी विक्षिप्त-सा रहने लगता है। वह अपनी बहिन प्रमिला डिक्रूज के साथ रहता है और दिन भर अपने फूलो की रक्षा करता रहता है। बर्टी एक मनोवैज्ञानिक चरित्र है। वह दिन भर उन फूलो की रखवाली इसलिए करता है कि वह विक्षिप्तता मे फूलो को ही अपनी प्रेयसी मानता है और रक्षा का मूल कारण यह है कि उसकी प्रेमिका की भाति कोई फूलो को भी चुरा न ले। चन्दर से वर्टी का पहला साक्षात्कार भी इसी प्रसग मे होता है। चन्दर डा० शुक्ला का लेख पम्मी के यहा टाइप करवाने आता है और वर्टी एक वृक्ष के पीछे से झट निकलकर चन्दर की गर्दन पकड लेता है और कहता है–"आज पकड लिया तुमको, तुम रोज-रोज यहा से फूल ले जाते हो।"[1] एक अन्य स्थान पर वह अपनी बहिन पम्मी से कहता है–"वह रात भर इन्ही फूलो पर नाचती रही और सुबह फिर अदृश्य हो गई, तुम्हे किसी फूल मे मिली तो नही ?"[2] वर्टी के चरित्र मे कितना गहरा मनोविज्ञान है।

---

१ गुनाहो का देवता, दसवा स०, पृष्ठ २८
२ वही, पृष्ठ ३९

जीवन के एक मोड ने बर्टी को पागल बना दिया है, वह तोते को मार डालता है और जब इच्छा होती है फूलो को तोड-मरोड डालता है और बैर की भावना से एक हाथ बन्दूक पर और एक वक्ष पर रख लेता है। यह सब कुछ देखने मे पागलपन लगता है, मगर जब कुछ विक्षिप्तता के क्षण हमारी जिन्दगी मे आते है तो क्या हर मानव ऐसा नही करता ? दिमाग की कुण्ठा इन्सान से क्या कुछ नही करवा सकती ? इन सब का प्रमाण बर्टी है। एक स्थान पर बर्टी कहता है।

'प्रत्येक लडकी पति खोजती है और प्रत्येक पत्नी प्रेमी।" [1] उसका यह सूत्र जैनेन्द्र के पात्रो पर लागू होता है। जैनेन्द्र के पात्र इसी फार्मूले पर आगे बढते है और जैनेन्द्र के पात्र ही नही, आज का आधा जीवन भी इसी फार्मूले पर चल रहा है। गिरते हुए जीवन मे बर्टी की यह एक पक्ति कितनी सशक्त और सत्य है। लेकिन इसके विपरीत बर्टी वह इन्सान है जो अन्य प्रेमिका की खोज मे नही है। वह दिन रात अपनी प्रेयसी के ध्यान मे रत है यहा तक कि वह कही आता जाता भी नही।

चन्दर और बर्टी उन दो प्रेमियो मे कितना अन्तर है। और दोनो का यह जो रूप निर्मित हुआ है इसका मूल कारण प्रेमिका ही है। बर्टी अपने प्रेम को पूजता नही, प्रेमिका को अपने निकट लाकर चन्दर की भाति उसे अछूता रख कर आदर्श मे जीना मजूर नही है।

उपन्यास समाप्त करने के बाद बर्टी का चित्र हमारी स्मृति मे सुरक्षित हो जाता है और हमारा मानस, प्रेम की एक नई परिभाषा ढूढने मे अपने आपको व्यस्त पाता है।

**गेसू—**

गेसू 'गुनाहो का देवता' का एक गौण चरित्र है। सुधा गेसू की घनिष्टतम मित्र है, वह गेसू से ही अपने मन की हर बात कहती है। गेसू और सुधा के माध्यम से उपन्यासकार ने कालेज-जीवन की झलकिया दी है।

गेसू स्वभाव से चचल है, क्लास मे भी वह चुप नही बैठ पाती। गेसू ने एक दम बीच से पूछा—'गुरुजी, गाधी जी आलू खाते हैं या नही ?"[2] क्लास मे दिखाई गई इस वाचालता के बाद बाहर लान मे आकर बैठ जाना और देर तक शेर सुनाते रहना उसकी आदत है, देखिये .

'गेसू उठी और सुधा की छाती पर सिर रख कर बोली—कैफ बरदोश,

---

१. वही, पृष्ठ २३२

२ 'गुनाहो का देवता' दसवा सस्करण, पृष्ठ ४५

वादलों को न देख,

वेखवर, तू न कुचल जाय कहीं।

और सुधा के गाल मे जोर से चुटकी काट ली। 'हाय रे' सुधा ने चीख कर कहा और उठ बैठी— वाह ! वाह ! कितना अच्छा शेर है, किसका है ?

पता नही किसका है। गेसू बोली—लेकिन बहुत सच है सुधो, आस्मा के वादलो के दामन मे अपने ख्वाव टाक लेना और उनके सहारे जिन्दगी बसर करने का खयाल है तो बडा नाजुक, मगर रानी, बडा खतरनाक भी है।"[1]

इस नाजुक खतरे से गेसू गुजर चुकी है। अख्तर मिया के साथ प्रेम और शादी के नाजुक ख्वाब उसने वादलो के दामन मे टाक दिये मगर ये सब सपने टके के टके ही रह गये और वेचारी गेसू समय के कदमो के साथ विवश समझौते करती रही। अपने प्रेमी के सुखी जीवन के लिये खुद नर्स बन गयी। इतना सब कुछ होने के वाद भी गेसू के मन मे अपने प्रेमी के लिये कोई शिकायत नही है, वदले की भावना नही है, नफरत नही है। गेसू मानती है कि "नफरत से आदमी न कभी सुधरा है, न सुधरेगा। वदला और नफरत तो अपने मन की कमजोरी को जाहिर करते हैं और फिर वदला मैं लू किससे ? उससे, दिल की तन्हाइयो मे मैं जिसके सिजदे पढती ?"[2]

गेसू वह लडकी है जिसने अपने प्रेमी को दिल की गहराइयो मे छिपा रखा था, जिससे शादी के लिए वह पागल थी, उसके सारे सपने ताश के महल की तरह गिर गये। गेसू यह भी जानती है कि इस सब का कारण परिस्थितिया नही है, खुद उसका प्रेमी है। लेकिन यह सब जानने के उपरान्त भी गेसू के माथे पर कोई शिकन नही है, भौंहो मे वल नही है, होठो पर शिकायत नही है। गेसू अपने प्रेमी को स्वर्णशिखर समझती थी पर वह ज्वालामुखी बन कर फूटा और उसने दर्द की पिघली आग की धारा मे गेसू को डुवा देने की कोशिश की लेकिन गेसू थी कि अटल चट्टान बन अडिग खडी रही।

रग वदलती हुई दुनिया की तीव्र गति पर गेसू को विश्वास नही था लेकिन जब ठोकर लगी तो आखें खुली की खुली रह गई। गेसू का यह कथन देखिये :

"इस एक साल मे दुनियां कितनी वदल गई है ? गेसू ने गहरी सास लेकर कहा—एक वार ये दिन चले जाते है, फिर वेदर्द कभी नही लौटते।"[3]

---

१. वही, पृष्ठ ४८

२. वही, पृष्ठ २९४

३. 'गुनाहो का देवता' दसवा स०, पृष्ठ २९६

सच, कहा लौटते हैं बीते हुए दिन ! ये तो बस एक बार आकर ढल जाते हैं। कोई इन्हे थामना भी चाहे तो थाम नही सकता, जैसे ये हाथ मे आ आ कर फिसलते चले जाते हैं।

गेसू को मात्र एक पक्ति मे समेटा जा सकता है कि गेसू एक आदर्श चरित्र है जब कि आज के युग मे आदर्श के इन मूल्यो का कोई स्थान नही है। गेसू का महत्व सिर्फ कहानी की दृष्टि से है। यह सब कुछ हो सकता है, इतना होने के बाद भी गेसू एक वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करती है। कच्ची उम्र मे कितनी लडकिया गेसू की भाति अपने सपने बादलो मे टाकती हैं, और अन्तत उन्हे भी गेसू की भाति ही विवश परिस्थितियो से समझौता करना पडता है।

इसी सब को स्पष्ट करने के लिए भारती ने गेसू का निर्माण किया है। इस दृष्टि से गेसू एक सफल पात्र है।

**प्रमिला डिक्रूज**

प्रमिला (पम्मी) चन्दर की मित्र है। पम्मी ईसाई है। वह पति को छोड चुकी है और अपने वर्तमान मे अपने भाई बर्टी के साथ रह रही है। पम्मी ने सर्वत्र शारीरिक प्रेम को महत्व दिया है, इसीलिए सुधा के और पम्पी के आयाम बिल्कुल अलग है। सुधा मे आदर्श की झलक है तो पम्मी शुद्ध यथार्थ मे जी रही है।

प्रारभ मे पम्मी ने चन्दर को शारीरिक दृष्टि से ही देखा था किन्तु धीरे धीरे चन्दर के लिए पम्मी के हृदय मे गहरी हमदर्दी जाग गई। लेकिन पम्मी चन्दर का साथ चाहती थी, चन्दर के होठो की तीखी प्यास चाहती थी और वह चाहती थी कि चन्दर उसके रूप के आकर्षण मे डूबा रहे। लेकिन जब पम्मी देखती है कि "चन्दर उसकी बाहो मे होते हुए भी दूर, बहुत दूर न जाने किन विचारो मे उलझा है, वह उससे दूर चला जा रहा है, बहुत दूर, पम्मी की धडकने अस्त-व्यस्त हो गई। उसकी समझ मे नही आया वह क्या करे। चन्दर को क्या हो गया ? क्या पम्मी का जादू टूट रहा है ?"[१]

पम्मी को यह मालूम है कि चन्दर ने उसे वैसे ही स्वीकारा है जैसे फूल शबनम को स्वीकारता है, जैसे बीमार आदमी मार्फिया के इन्जेक्शन को स्वीकारता हैं। पम्मी कही भी भावना को महत्व नही देती, उसने ज़िन्दगी के अनुभवो से सीखा है कि तर्को से जिन्दगी बसर नही होती। पम्मी दूसरो को उपदेश दे सकती है लेकिन खुद उनसे बहुत दूर रहती है क्योकि तर्को का खोखलापन वह बहुत अच्छी तरह से जानती है।

---

१. 'गुनाहो का देवता' दसवा स०, पृष्ठ ३०१

पम्मी चन्दर की मित्र है और अनुभव व उम्र दोनो मे चन्दर से बडी है। उसने समय समय पर टूटते हुए चन्दर को सभाला है। चन्दर को उसने अपने हृदय की धडकन दी हैं, सपने दिये हैं और मन की परवाजें दी हैं। इसीलिए तो चन्दर के मन मे पम्मी के प्रति जो भाव हैं वे "कृतज्ञता, पुण्य और पाप के बन्धन से ऊपर उठकर"[1] हैं।

सच तो यह है कि पम्मी न ही चन्दर को एक अच्छा इसान बनाया है। चन्दर जब जब भी भटका है तो पम्मी के पास गया है और पम्मी ने उसे समेट लिया है, उसे टूटने नही दिया है, बिखरने नही दिया है। चन्दर को उसने बहला दिया है और चन्दर ने अपने आप को सतुलित महसूस किया है। जब जब भी सुधा की याद ने चन्दर को परेशान किया है तो चन्दर पम्मी के ही पास भागा है और पम्मी ने उसे अपने आचल की छाया मे बिठाकर उसका पसीना पोछा है। पर इस सारे स्नेह के पीछे शारीरिकता का गहरा सत्य छिपा हुआ है—जिस सत्य को पम्मी ने फिर स्पष्ट भी कर दिया है "कपूर, सैक्स इतना बुरा नही जितना मैं समझती थी।"[1]

इस धूपछाही खेल मे जब पम्मी सफल नही हुई तो वह चन्दर को छोड कर पुन अपने पति के पास लौट गई। "कपूर, एक दिन तुम्हारी और बर्टी की चीख सुनकर अपूर्ण वेश मे ही अपने शृगार-गृह से भाग आई थी और तुम्हे फूलो के बीच मे पाया था। आज तुम्हारी आवाज़ मेरे लिए मूक हो गई है और असतोष और उदासी के काटो के बीच मे तुम्हे छोडकर जा रही हूँ।"[2]

पम्मी चन्दर को छोडकर अपने पति के पास लौट गई लेकिन इस लौटने मे गेसू के प्रेमी की तरह धोखा नही है। पम्मी बहुत स्पष्टवक्ता है। उपन्यास की समाप्ति पर पम्मी पाठक को अपने चरित्र मे बाध लेती है। यह वह चरित्र है जो मूर्ति पर चढे फूलो को हटा देता है और मूर्ति अनावरित हो जाती है।

कुल मिलाकर पम्मी का चरित्र नि सदेह यथार्थ की भूमि पर अकित हुआ है, जहा सत्य है। पम्मी भी बर्टी की ही भाति जाने-अनजाने मे सैक्स की गुत्थियो पर विचार डालती है और इसीलिए पम्मी का चरित्र मनोविज्ञान के अधिक निकट है। पम्मी मे गोपन प्रवृत्ति नही है। सुधा, गेसू और बिनती से अलग, पम्मी सत्य की दुनिया मे जीती है जहा अपने साथ छलाव नही है मन के भीतर कोई गुत्थी नही है और जो भी कुछ है 'सबै भूमि गोपाल की' की भाति स्पष्ट और साफ है। इस कटु सत्य के दर्शन के बाद भी पाठक की सहानुभूति पम्मी के साथ रहती है।

---

१ 'गुनाहो का देवता' दसवा स०, पृष्ठ २६५

२. वही, पृष्ठ ३०५

## माणिक मुल्ला

कथा को यह रूप देने का सारा उत्तरदायित्व माणिक मुल्ला को है। कहानी के विषय मे माणिक मुल्ला का विशाल अध्ययन है और कहानी-कला पर पूर्ण अधिकार है। कहानी कहने की वडी सहज रुचि माणिक मे है। एक स्थान पर लेखक को किताव पढते देख, माणिक गुस्से होकर किताव छीनकर फेंक देता है और वुजुर्गाना लहजे मे कहता है—यह लडका विल्कुल निकम्मा निकलेगा। मेरे कमरे मे वैठकर दूसरो की कहानिया पढता है। छि वोल कितनी कहानिया सुनेगा ?"[1] और इसी प्रसग मे माणिक मुल्ला ने एक सप्ताह तक अविच्छिन्न क्रम मे लगभग सात कहानिया कही हैं।

माणिक मुल्ला इन कहानियो का वक्ता ही नही प्रमुख पात्र भी है। कहानिया उसके ही जीवन से उठायी गयी हैं जिनका भोग माणिक मुल्ला ने स्वय किया है। उपन्यास को पढ लेने के वाद हमे महसूस होता है कि उपन्यास मे आदि से अन्त तक माणिक मुल्ला ही माणिक मुल्ला हैं जिसने सहज मानवीय दुर्वलताओ से अनेक कटु अनुभवो को अर्जित किया और अव जीवन को समझ कर मानवता के उज्ज्वल भविष्य मे आस्थावान है। जव जमुना के जीवन की करुण कथा को सुनकर श्याम के रोने की वात मित्रो ने माणिक मुल्ला से कही और श्याम झेंप कर वोला—"मैं कहा रो रहा था ?" तव माणिक मुल्ला हँसे और जो वोले वह किसी भुक्त-भोगी ही का कथन हो सकता है—"हमारी जिन्दगी मे जरा सा पर्त उघाड कर देखो तो हर तरफ इतनी गन्दगी और कीचड छिपा हुआ है कि सचमुच उस पर रोना आता है, लेकिन प्यारे वन्धुओ मैं तो इतना रो चुका हूँ कि अव आसू आता ही नही। अत लाचार होकर हसना पडता है। एक वात और है, जो लोग भावुक होते हैं और रोते हैं वे सिर्फ रो-धोकर रह जाते हैं, पर जो लोग हसना सीख लेते हैं कभी-कभी हसते-हसते जिन्दगी को वदल भी डालते हैं।"[2] माणिक के जीवन मे कई परिस्थितिया आयी हैं। माणिक ने प्रेम की ट्रेजेडी को भोगा है और इन ट्रेजेडियो के भुगतने के वाद माणिक ने हसना सीखा है। यह हसी वह हसी नही है जो एक क्षण के उल्लास के वाद हवा मे उडायी जा सके।

माणिक मुल्ला अपने मुहल्ले के मशहूर व्यक्ति थे और वे मुहल्ले के उस हिस्से के निवासी थे जो सवसे ज्यादा रगीन और रहस्यमय था, जिसकी नयी और पुरानी पीढी दोनो के वारे मे अजीव-अजीव सी किंवदन्तियाँ मशहूर थी।

---

१. 'सूरज का सातवा घोडा,' प्रथम स०, पृष्ठ १७

२ 'सूरज का सातवा घोडा,' प्रथम स०, पृष्ठ ३१

कहानी सुनने वाले सब लोग माणिक मुल्ला को गुरुवत् मानते थे और माणिक का उन सब पर निश्छल एवं प्रगाढ स्नेह था। माणिक का व्यक्तित्व असाधारण हैं, उनका कमरा अक्सर उन वस्तुओ से सजा सवरा रहता है जो सामान्यत अन्यो के यहा नही पायी जाती।

माणिक की मान्यताए भी अन्यो से जरा पृथक् होती है। ज्ञानवर्द्धन के बाद खरबूजा काटते हुए माणिक कहते है 'प्यारे बन्धुओ, प्रेम मे खरबूजा चाहे चाकू पर गिरे चाहे चाकू खरबूजे पर, नुकसान हमेशा चाकू का होता है। अत. जिसका व्यक्तित्व हमेशा चाकू की तरह तेज और पैना हो उसे हर हालत मे इस उलझन से बचना चाहिए।''[1]

कहानी के बारे मे माणिक की निश्चित धारणा है कि "कहानियो की तमाम नस्लो मे प्रेम-कहानियां ही सबसे सफल साबित होती हैं। अत कहानियो मे रोमांस का अंश जरूर होना चाहिए। लेकिन साथ ही हमे अपनी दृष्टि संकुचित नही कर लेनी चाहिए और कुछ ऐसा चमत्कार करना चाहिए कि वे समाज के लिए कल्याणकारी अवश्य हो।'[2] रोमास और कल्याणकारिता का यह अद्भुत समन्वय माणिक की कहानियो मे है जो सचमुच अन्यत्र अनुपलब्ध है। बाजीगर के मुह मे निकाली गई आग की भाति माणिक प्रेम-कहानियो मे सामाजिक कल्याण का निष्कर्ष निकालने मे निपुण है। माणिक ने पहले इन सब कहानियो को भोगा है, फिर श्रोताओ को दिया है। अत माणिक जो निष्कर्ष देते हैं वे बड़े प्रभावशाली और महत्वपूर्ण होते हैं।

माणिक एक असफल प्रेमी है। अत जीवन की ठोकरो ने उन्हे हम से ज्यादा कुछ सिखाया है। माणिक की इन ठोकरो से हमारा पूरा का पूरा समाज जुडा है। समाज की यथार्थता को स्पष्ट करने के लिए माणिक का चरित्र अपने आप मे पूर्ण है और माणिक यह सारी कहानिया हमे कह भी देते हैं और इन सब कहानियो के नायक भी वे स्वय ही हैं। अ त मे पाठक माणिक की होशियारी और उनकी कला पर मुग्ध होता हुआ सिर थाम कर माणिक पर कुछ देर सोचने के लिए मजबूर हो जाता है।

उपन्यास की सारी कहानिया पैबन्दो की तरह माणिक से चिपकी हुई है। सभी कहानियो मे माणिक का प्रेम-सम्बन्ध है क्योकि यह सम्बन्ध उन्हे कहानियो मे अपने आपको एक प्रमुख पात्र बना देने के अलावा पाठको के सामने इन कहानियो

---

१ 'सूरज का सातवा घोडा, प्रथम स०, पृष्ठ ११

२ वही पृष्ठ ११

को सबसे अधिक प्रभावशाली और रोचक ढग से रखने का काम भी करता है। माणिक हमे वास्तविकता से परिचित करवाते है और बर्फ की पर्त के नीचे छिपे अथाह जल की ओर सकेत करते हैं जहा मृत्यु है, अंधेरा है, कीचड है।

माणिक ने कम से कम तीन लडकियो से प्रेम किया है—जमना, लिली और सत्ती, लेकिन माणिक हर जगह असफल रहे हैं। माणिक की ये कहानिया बीते हुए युग की होने के बावजूद भी आज के परिवेश मे अपना महत्व रखती है और आज के परिवेश के अर्थ के कारण ही उपन्यास महत्वपूर्ण बन गया है और इस महत्व का कारण है—सचाई, जीवन की एक गहरी सचाई का चित्र यहा दर्शनीय है। निम्न मध्यम वर्ग की सचाई का चित्र यहाँ जीवित होकर साँसे लेता है। बाहरी और भीतरी दोनो ही जीवनो के चित्र यहाँ मूर्त्त हैं।

माणिक हमारी जिन्दगी के निकट हैं। वे भी हम लोगो जैसे (मध्यम वर्ग) सिद्धान्त छाँटते हैं, उन पर अमल नही करते। इसीलिए वे जमना, लिली और सत्ती को भुलाने की चेष्टा करते हैं लेकिन भुला नही पाते। प्रेम के हर मोर्चे पर वे ठहर कर हार जाते है। वे विचार बनाते है जिनमे अन्तर्विरोध, ढोग, खयाली बहकाव और मिथ्या-दर्शन दिखायी देता है, जो अन्तत. हमारा सत्य है और यही सत्य माणिक और उपन्यास की आत्मा है।

माणिक ने अपनी ज़िन्दगी मे विषम परिस्थितियो से समझौता किया है। माणिक ने हमारी थोथी और नगी ज़िन्दगी को बहुत करीब से परखा है। ज़िन्दगी क्या कुछ है, मन के सपने किस तरह से जखम बन जाते हैं, इस बात को माणिक बहुत अच्छी तरह से जानते है और जखम वापस कैसे भरते है, इस बात को भी माणिक बहुत अच्छी तरह से जानते हैं। माणिक ने रोगी और डाक्टर जैसे दो विपरीत ध्रुवो का अध्ययन एक साथ किया है।

**आदर्श एवं यथार्थ**

विश्व की जितनी भी समस्याएं है, उनकी पृष्ठभूमि मे कही न कही आदर्शवाद निश्चय ही क्रियाशील रहता है। आदर्शवाद केवल निर्माण तक ही सीमित नही है बल्कि व्यापक सुधार की आवश्यकता भी सिद्ध करता है। इसी कारण आदर्शवाद मात्र जीवन को निर्माण एव विकास की ओर ही दिशोन्मुख नही करता अपितु ज्ञान एव दर्शन के मूल स्वर एव आत्मा का भी स्पष्टीकरण सशक्त स्वरो मे करता है।

आदर्शवाद जीवन की पीड़ादायक स्थिति का पूर्ण तिरस्कार कर भावुकता की काल्पनिक भूमि पर कल्पनाशील सृष्टि की रचना का प्रयास करता है जिसमे सर्वत्र आनद तत्त्व ही सचरित होता है।

इसके ठीक विपरीत यथार्थवाद सत्यानुभूति से प्रेरित चित्रण पर बल देता है। यथार्थवाद कल्पना का पूर्णत तिरस्कार नही करता लेकिन कल्पना से उसका सम्बन्ध वही तक रहता है जहा तक उसकी अनिवार्यता रहती है। यथार्थवाद के, विद्वानो ने अनेक भेद किये है लेकिन इन सब की पृष्ठभूमि मे है सत्यानुभूति ही।

इस यथार्थ का सम्बन्ध उपन्यासो से तो विशेष है ही। कविता यथार्थ की उपेक्षा कर सकती है, सगीत यथार्थ को छोडकर भी जी सकता है पर उपन्यास और कहानी के लिए यथार्थ प्राण है।

भारती के पहले उपन्यास 'गुनाहो का देवता' मे आदर्श का भरपूर चित्रण हुआ है। हा, कही-कही यथार्थ भी मार्मिकता से उभरा है। उपन्यास के प्रमुख व्यक्तित्व हैं चन्दर और सुधा, वे एक दूसरे को अपने सम्पूर्ण सर्वस्व से प्यार करते हैं और एक दूसरे के लिए कही भी काम आने मे गौरव का अनुभव करते हैं। 'गुनाहो का देवता' मे साहित्यिक आदर्श अपने चरम विन्दुओं पर देखे जा सकते हैं।

भावुकता और वासना मे उलझकर भी व्यक्तित्व किस प्रकार उभर सकता है, भारती ने इस उपन्यास मे चन्दर के माध्यम से व्यक्त किया है। चन्दर और सुधा का प्रेम काल्पनिक भावुकता के रेशमी तानो-बानो से सुगुम्फित किया गया है और उसका सम्बन्ध आज के सामाजिक यथार्थ से जोडने का प्रयत्न किया गया है। यह पूरी भूमि आदर्श की है, क्योकि जीवन मे प्रेम है, प्रेम जीवन नही है, जबकि चन्दर और सुधा प्रेम को ही जीवन मान बैठते हैं। सुधा और चन्दर मे द्वन्द्व नही है। किशोरावस्था से ही चन्दर सुधा का सर्वस्व बन बैठा है, चन्दर की कल्पनाओ मे ही सुधा सोती जागती है और उसके सुख-स्वास्थ्य की चिन्ता ही उसकी प्रमुख चिन्ता है। सुधा की शादी हो जाने के बाद भी उसकी विचारधारा मे कोई अन्तर नही आता। एक स्थान पर सुधा कहती है—

"दुर्बलता—चन्दर तुम्हे ध्यान होगा, एक दिन हम लोगो ने निश्चय किया था कि हमारे प्यार की कसौटी यह रहेगी चन्दर, दूर रहकर भी हम लोग ऊचे उठेंगे, पवित्र रहेंगे। दूर हो जाने के बाद चन्दर तुम्हारा प्यार तो मुझ मे एक दृढ आत्मा और विश्वास भरता रहा। उसी के सहारे मैं अपने जीवन के तूफानो को पार कर ले गई, लेकिन पता नही मेरे प्यार मे कौन सी दुर्बलता रही कि तुम उसे ग्रहण नही कर पाये···· "

सुधा का चन्दर भी इस प्रकार के आदर्शो मे जीता है। वह सुधा को पास मे लाकर भी दूर रखता है क्योकि वह देवता है और यह देवता पवित्रतावादी आदर्श में विश्वास रखता है। वह सुधा के प्लेटोनिक प्रेम के सहारे ऊचा उठना चाहता है

उसे खोकर भी समर्थ एव प्रसन्न बना रहना चाहता है। लेकिन उसका अन्तर्मन इसके प्रति विद्रोह कर उठता है। मूल वृत्तियो को बहुत देर तक भुठलाया नही जा सकता। सुधा के प्रति आध्यात्मिक प्रेम की प्रतिक्रिया चन्दर के मन मे वासना मूलक प्रेम पैदा करती है। चन्दर के मन की कुठाए उसे विक्षिप्त कर देती है, उसका अह और व्यक्तिवाद उसे स्वय पराजित करता है और वह अपने अह की तृप्ति के लिए गुनाह पर गुनाह करता चला जाता है और प्रेम का यह सारा व्यापार मानसिक स्तर तक सिमट कर रह जाता है।

इस प्रेम की जडें समाज की मान्यताओ तक नही पहुँच पाती, मध्यवर्ग को आश्वस्त नही कर पाती, अपितु पगु बना देती है। चन्दर की आराधना उसकी वर्गीय नैतिकता है जो भीतर से सड चुकी है। इधर सुधा अपने प्रेमी के निर्माण मे टूट जाती है, मानो उसके जीवन मे अन्य किसी बात के लिए स्थान नही है। सुधा का कथन देखिये —

"चन्दर एक बात कहूँ, अगर बुरा न मानो तो। आज शादी के छह महीने बाद भी मै यही कहूँगी चन्दर, तुमने अच्छा नही किया। मेरी आतमा सिर्फ तुम्हारे लिये बनी थी, उसके रेशे मे वह तत्त्व है जो तुम्हारी ही पूजा के लिये था। तुमने मुझे दूर फेंक दिया, लेकिन इस दूरी के अधेरे मे भी जन्म जन्मान्तर तक मै भटकती हुई सिर्फ तुम्ही को ढूढूगी, इतना याद रखना। और इस बार अगर तुम मिल गये तो ज़िन्दगी की कोई ताकत, कोई आदर्श, कोई सिद्धान्त, कोई प्रवचना मुझे तुमसे अलग नही कर सकेगी।"[१]

लेकिन इस सब की जड भी है यथार्थ मे ही। अब सुधा का मन प्यार की घाटियो मे, याद के जालो मे, शेर और कविता मे नही लगता। "उन दिनो शायद किसी को प्यार करती रही होऊ तभी कविता मे मन लगता था। ......ये कविताएँ मन के दर्द के आगे सभी फीकी है।"[२]

"गुनाहो का देवता" ध्वसोन्मुखी मध्यवर्ग का सजीव चित्र है जिसमे बर्टी और पम्मी जैसे शुद्ध यथार्थपरक चित्र भी उभरे है। बर्टी ने कही भी भावुकता को स्थान नही दिया हैं। बर्टी एक स्थान पर चन्दर से कहता है :

"मै इतनी सलाह तुम्हे दे रहा हूँ कि अगर तुम किसी लडकी से प्यार करते हो तो ईश्वर के वास्ते उससे शादी मत करना, तुम मेरा किस्सा सुन चुके हो। अगर

---

१. "गुनाहो का देवता', दसवा सं०, पृष्ठ २६०

२. वही, पृष्ठ १५७–५८

दिल से प्यार करना चाहते हो और चाहते हो कि वह लडकी जीवन भर तुम्हारी कृतज्ञ रहे तो तुम उसकी शादी करा देना ”[१]

बर्टी और पम्मी के चरित्र मे स्पष्टता है। इसीलिए पम्मी भी अपनी परिस्थिति को स्पष्ट करके पुन अपने पति के पास चली जाती है।

चन्दर, जो मध्यवर्ग का युवक है, का प्रेम भीतर से कितना थोथा हो चुका है, कितना रीत गया है, कितना कट गया है। और किस भाति उसके सपने उसी की आखो के सामने जलकर खाक हो गये हैं। यह सब अन्त मे यथार्थ का एक ठोस चित्र हमे दे जाते हैं।

'गुनाहो का देवता' में अन्त तक भी सुधा अपने आदर्शों मे जीती है, मृत्यु के पहले तक उसे चन्दर का पूरा ध्यान है। इस प्रकार कुछ चित्र यथार्थपरक होने के उपरान्त भी कुल मिलाकर उपन्यास आदर्शपरक ही है।

'सूरज का सातवा घोडा' सामाजिक यथार्थ पर आधारित एक सशक्त कृति है। इसमे यथार्थ तो है ही पर यथार्थ के साथ तीखे, नुकीले और चुटकीले व्यग्य भी हैं। बात एक और भी है, 'गुनाहो का देवता' का लेखक स्रष्टा है और 'सूरज का सातवाँ घोडा' मे यही लेखक व्यग्यकार बन बैठा है। स्रष्टा को अपनी सृष्टि से प्रेम होता है वह अपनी सृष्टि को अपने लहू का रग देता है, आत्मा की आवाज़ देता है, अपने हृदय की धडकनो से उसे जीवित रखता हैं, स्रष्टा मे द्वैत का भाव होता ही नही। जबकि व्यग्यकार जिस वस्तु पर व्यग्य करता है उससे स्वय की सत्ता को सर्वथा अलग रखता है। जिस वस्तु पर वह व्यग्य करता है उसके प्रति वह निर्मम होता है और यही निर्ममता है जो लेखक से ठोस यथार्थ अकित करवाके हमे सही मार्ग बताती है। 'सूरज का सातवा घोडा' ऐसे ही निर्मम व्यग्यकार की रचना है जो कुछ ठोस निष्कर्ष देकर मध्यवर्ग का मार्ग दर्शन-करती है।

'सूरज का सातवा घोडा' की विषय-वस्तु है हमारे निम्न मध्यवर्ग का सही चित्रण। यह सत्य है कि यह चित्र प्रीतिकर या सुखद नही है और भारती ने यथा शक्य इसका सच्चा चित्र उतारना चाहा है। पर यह असुन्दर या अप्रीतिकर भी नह है क्योकि यह मृत नही है और न ही मृत्यु-पूजक ही है।”[२]

उपन्यास सामाजिक विकृतियो को दृष्टि मे रखकर लिखा गया है औरी कुछ बडी ही विषम जीवन-स्थितियो को उनके यथार्थ परिवेश मे विभिन्न दृष्टि- देखने का प्रयत्न किया गया है। सामाजिक और आर्थिक कारणो से ही

१. वही, पृष्ठ २३२

२ 'सूरज का सातवा घोडा', प्रयम स०, पृष्ठ ५

जमुना अपने प्रथम प्रेम की कल्पना मूर्त्ति तन्ना से न ब्याही जाकर एक बूढे से ब्याह दी जाती है, जहा वह पति को, समाज को, स्वय अपने को धोखा देकर रामघन के द्वारा अपनी वासना-तृप्ति करती है। सत्ती का जीवन भी आर्थिक सघर्षों एव सामाजिक विकृतियो के बीच नष्ट हो जाता है। "वास्तव मे आर्थिक ढाचा हमारे मन पर इतना अजब-सा प्रभाव डालता है कि मन की सारी भावनाए उससे स्वाधीन नही हो पाती और हम जैसे लोग जो न उच्च वर्ग के हैं न निम्न वर्ग के उनके यहा रूढिया, परम्पराए, मर्यादाए भी ऐसी पुरानी और विषाक्त हैं कि कुल मिलाकर हम सबो पर ऐसा प्रभाव पडता है कि हम यन्त्र मात्र रह जाते हैं। हमारे उदार और ऊंचे सपने खत्म हो जाते हैं और एक अजब-सी जड मूर्च्छना हम पर छा जाती है।"[1]

जिस प्रेम को भारती 'गुनाहो का देवता' मे पूर्णत स्वच्छन्द और वैयक्तिक मानते है उसी को 'सूरज का सातवा घोडा' मे आर्थिक और सामाजिक पृष्ठभूमियो मे ग्रहण करते हैं। तन्ना और जमुना अपने वर्ग की रूढियो और थोथी मर्यादाओ पर बलि चढ गये। लेखक ने माणिक की मनोवैज्ञानिक कुंठा को यथार्थवादी ढग से चित्रित किया है। मध्यवर्गीय अनाचार तथा कुंठाओ को उखाडने के लिये भारती ने व्यग्य का प्रयोग एक पैने नश्तर के रूप मे किया है।

माणिक के रूप मे उन मध्यवर्गीय युवको की मन. स्थिति का यथार्थ चित्रण है जो साहस के अभाव मे अपने प्रेम मे ही असफल नही होते बल्कि अपने से अधिक ईमानदार नारियो की दुर्दशा का कारण भी बनते हैं। ऐसे युवक और तो कुछ कर नही सकते, आत्म-ग्लानि से अभिभूत होकर आत्म-घाती हो जाते हैं।

माणिक द्वारा कही गई ये प्रेम-कहानिया हमारी भीतरी जिन्दगी पर प्रकाश डालती हैं। जीवन के यथार्थ को माणिक के इस कथन मे देखिये

"देखो ये कहानिया वास्तव मे प्रेम नही वरन् उस जिन्दगी का चित्रण करती हैं जिसे आज का निम्न मध्यवर्ग जी रहा है।"[2]

ज़िन्दगी के यथार्थ का एक और चित्र देखिये .

"हमारी ज़िन्दगी का जरा सा पर्त उखाड कर देखो तो हर तरफ इतनी गन्दगी और कीचड़ छिपा हुआ है कि सचमुच उस पर रोना आता है।"[3] क्या यह हमारे जीवन की वास्तविकता नही है, क्या हमारे नेत्रो के पर्दे हट जाने के बाद यही

---

१. वही पृष्ठ ४८–४९

२. 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ ११३

३. वही, पृष्ठ ३१

सब कुछ हमारे जीवन मे नही है ? शायद है, इसीलिए तो कभी माणिक की बात हमारे हृदय को चीर कर निकल जाती है ।

'सूरज का सातवा घोडा' की सभी कहानिया एक ही मुहल्ले की है जो एक ही मुहल्ले के विभिन्न स्तरो और रूपो के चित्र है । ये चित्र एक दूसरे मे जुडे हुए इसलिए लगते हैं कि एक ही आदमी ने इनका वर्णन किया है जो एक कहानी के किसी भी छोटे बडे पात्र को लेकर दूसरी कहानी गढ देता है ।

पहली कहानी जमुना के रूप मे मध्यवर्ग की नब्बे प्रतिशत लडकियो की कहानी है जो जमुना ही की परिस्थिति मे है । वे बेचारी क्या करें, उनके पिता दहेज जुटा नही पाते । ऐसी स्थिति मे उनकी स्थिति ठीक जमुना जैसी है । जमुना मध्यम-वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है और यह प्रतिनिधित्व काफी सीमा तक सही है, यथार्थपरक है ।

सामाजिक यथार्थ को समझने की दृष्टि भारती मे खूब है । 'सूरज का सातवा घोडा' एक सशक्त उपन्यास है जिसमे हर जगह हमारी वास्तविकता, नग्नता, और कुठा छाई हुई है । इसीलिए भारती की हसी यहा निर्मम व्यग्यकार के जहर और कडवाहट मे बुझी हुई तीखी हसी है । "जो लोग हसना सीख लेते हैं वे कभी कभी हसते-हसते जिन्दगी को बदल भी डालते हैं ।"[1]

'खाओ, बदन बनाओ' एक कहानी का निष्कर्ष है,[2] क्या यह निष्कर्ष माणिक मुल्ला के रुदन की गूज नही है ? इसी तरह जमुना की कहानी का निष्कर्ष माणिक के हृदय को कचोटी हुई कटुता, निराशा और कठोर वास्तविकता का पर्याप नही है ? ये निष्कर्ष ऊपर से चाहे जितने भी हल्के क्यो न लगें मगर इनकी सत्यता हमसे कैसे जुडी हुई है—इसे कहानी कहने वाला, सुनने वाले और पढने वाले सभी अच्छी तरह से जानते है ।

'घोडे की नाल' की ये पक्तिया

इतनी बडी कोठी थी, अकेले रहना एक विधवा महिला के लिए अनुचित था अत उसने रामधन को भी एक कोठरी दी और पवित्रता से जीवन व्यतीत करने लगी । एक दिन कही रेल-सफर मे माणिक को रामधन मिला । सिल्क का कुरता, पान का डब्बा, बडे ठाठ थे उसके ।"[3] क्या आज के विधवा जीवन की खिल्ली नही है ? कथनो मे छिपे सत्यो का उद्घाटन कहा तक किया जाय ? लगता

---

१ 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ ३१

२ यह निष्कर्ष चौथी कहानी का है ।

३ 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ ३८

है पूरे काफिले पर एक चादर फैल गई है, जिसके नीचे सासें नही हैं और उन्नत-मस्तक चिमनिया धुम्रां उगल रही हैं जो पूरे काफिले मे फैल गया है, पर चिमनिया फिर भी शान्त और उन्नत-मस्तक हैं। धुआ इतना गहरा हो गया है कि उसमे दवी वास्तविकता को पहचानने मे बहुत कठिनाई आती है।

**भाषा एव शिल्प**

'गुनाहो का देवता' एव 'सूरज का सातवा घोडा' दोनो की भाषा एव शिल्प मे पर्याप्त अन्तर है। 'गुनाहो का देवता' की भाषा रोचक और रमणीय है क्योकि 'गुनाहो का देवता' की भूमि भी भावात्मक है जहा आहेंसर्दा और रगेजर्दा मे वातावरण ढला हुआ है वहा भारती ने वैसी ही भाषा का प्रयोग किया है जो रूमानी, चित्रात्मकता, इन्द्र-धनुषी और फूलो से सजी हुई है। इसकी भाषा मे भावानुकूलता, भाषा की समाहार शक्ति, कल्पना-चातुर्य और कहे कि नवनवोन्मेष-शालिनी प्रतिभा है।

इसमे लेखक की अन्तरात्मा का स्वर प्रणय की ताल और लय के साथ प्रतिध्वनित हुआ है। लेखक का इष्ट भाव प्रेम है और इष्ट भाव की चर्वणा अपेक्षित है जिसके लिए भारती ने बाह्य-परिवेश का सहारा लिया है। भारती की भाषा मे भाव इस प्रकार झलकते हैं जिस प्रकार अंगूर के दानो मे रस साफ-साफ झलकता हुआ दिखाई देता है। सायास कठिन शब्दो का प्रयोग भारती ने नही किया है, वाणी उसकी जिह्वा पर नर्तित है, वाणी को वह जो भगिमा देना चाहता है, वडी सहजता से दे देता है। भाषा मे फारसी इस भाति ढली है कि उससे भाषा पर तारल्य कम्पन और रेशमीपन छा गया है जो प्रणय के उतार-चढाव, धडकनो के वासन्ती दर्द और छेडछाड की सरसराहट को मूर्त्त करने मे समर्थ है।

'गुनाहो का देवता' एक प्रेम-कथा है जो शुद्ध भाव-भूमि पर टिकी हुई है, इन भावो को अपने मे समेटे हुए है— चन्दर और सुधा। पहली घटना जो उपन्यास को मोड देती है वह सुधा का किसी अन्य के साथ विवाह हो जाना और चन्दर की भावना को चोट लगना। लेकिन सुधा विवाहोपरान्त भी स्वय को चन्दर की ही मानती है। विनती और गेसू का चरित्र भी सुधा के चरित्र पर ही प्रकाश डालता है। पम्मी चन्दर के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती है और वर्टी शायद सब का मार्ग-दर्शन करता है। इस प्रकार कथानक तो सुगठित है ही, घटनाए भी सुगठित है और शैली भी सुगठित है। कुछ अतिरिक्त पात्रो का भी भारती ने निर्माण कर दिया है जिनके न होने से उपन्यास मे पृष्ठ तो अवश्य कम होते लेकिन शायद टोटल-इफेक्ट पर कोई अन्तर नही आता जैसे बुआ जी, दुबे जी।

पूरे उपन्यास मे बुआ जी की कोई आवश्यकता नही है सिवाय इसके कि विनती उनकी पुत्री है और वे विनती की माताजी हैं। वे हर जगह टाग अडाती रहती हैं और अन्त मे सब कुछ छोड-छाड कर तीर्थ-यात्रा पर निकल पडती हैं और वदली हुई ट्रेनो मे हर किसी डिव्वे मे जा बैठती हैं और ईश्वर के नाम पर प्रथम और तृतीय श्रेणी मे कोई अन्तर नही मानती।

इधर दुवे जी, खाने मे कुशल और तोद पर हाथ फेरने मे चतुर। इनके न होने से उपन्यास के उद्देश्य मे कोई अन्तर नही आता। गेसू भी प्रसग से ही आई है पर उसका महत्व है। पम्मी का भी महत्व है। पम्मी और चन्दर के मिलन के ताने-वाने भी आपस मे इस भाँति घुल गये हैं कि खटकते नही।

जहा तक शिल्प का प्रश्न है, 'गुनाहो का देवता' नाटकीय शिल्प-विधि का उपन्यास है। इसमें लेखक ने दृश्य-विधान-शैली अपनाई है। इस उपन्यास मे सीमित अभिरुचि, सीमित दृष्टिकोण, सीमित स्थान और सीमित समय का अ कन हुआ है।

भारती ने इस रचना मे वासना के अन्तर्द्वन्द्व को नाटकीय रूप देने का प्रयत्न किया है। हिन्दी उपन्यास मे नाटकीय शिल्प-विधि के रूप मे 'गुनाहो का देवता' का योगदान अविस्मरणीय है। आधुनिक युग-चेतना के वहु-स्तरीय जटिल यथार्थ को प्रेम और वासना के परिप्रेक्ष्य मे नाटकीय प्रभाव के साथ सप्रेपित करने मे भारती सिद्धहस्त हैं।

'गुनाहो का देवता' की अधिकाश कथा सवादो द्वारा अभिव्यजित हुई है। सुधा और चन्दर के सवाद ही कथा को आगे वढाते हैं, यथा

'उसने सुधा की अ गुलिया अपनी पलको से लगाते हुए कहा—सुधी मेरी, तुम उस लडके से विवाह कर लो।

क्या ? सुधा चोट खाई हुई नागिन की तरह तडप उठी। इस लडके से ? यही शक्ल है इसकी मुझसे व्याह करने की।[1]

'चादनी के खण्डहर' का नायक वसन्तकुमार कमरे से वार्ता करता है। 'गुनाहो का देवता' मे चन्दर अपने ही प्रतिविम्व से वात करता है लेकिन मानसिक विश्लेषण नही करता। परिस्थिति और चरित्र के सघात मे अपने व्यक्तित्व के उतार-चढाव का नाटकीय प्रभावात्मक चित्र भी प्रस्तुत करता है। इसी वार्ता मे आगे प्रतिविम्व चन्दर को दार्शनिक परिवेश की दिशा मे ले जाते हुए वताता है कि सत्य उसे मिलता है जिसकी आत्मा शान्त और गहरी होती है, समुद्र के अन्तराल की

---

१ 'गुनाहो का देवता', दसवा स०, पृष्ठ १४६

तरह । समुद्र की ऊपरी सतह की तरह जो विक्षुब्ध और तूफानी होता है उसके अन्तर्द्वन्द्व मे चाहे कितनी ही गरज हो लेकिन सत्य की शान्त अमृतमयी आवाज नही होती।

'गुनाहो का देवता' मे भारती ने अपनी दृष्टि नये विषय, नये रूप की ओर केन्द्रित की है। विषय की दृष्टि से भारती ने भारतीय मध्य वर्ग के शिक्षित, सुसस्कृत व्यक्ति की विचारणा, सिद्धान्त और यथार्थ जीवन के अन्तराल को नाटकीय शिल्प मे रूपायित किया है। भारती वर्णनात्मक शिल्प के कथाकार की भाति आधुनिक पुरुष द्वारा नारी पर अनगिनत अत्याचारो का विवरण नही देते, वे एक पुरुष द्वारा तीन नारियो (चन्दर द्वारा सुधा, पम्मी और बिनती) पर किये गये अत्याचार और क्रूरता का नाटकीय प्रभाव सप्रेषित करते हैं। भारती सुधा के असतोष की लहरो को गिनते हैं, बिनती के सफल विद्रोह का मूल्याकन करते हैं और पम्मी के रूप मे आधुनिकाओ की नग्न वासना के पट खोलते हैं।

भारती ने प्रेम और विवाह जैसी शाश्वत विडम्बनाओ के चित्र भी अकित किये हैं। चन्दर अनेक बार सोचता है कि क्या पुरुष और नारी के सम्बन्ध का एक ही रास्ता है—प्रणय, विवाह और तृप्ति। उसे सुधा का कैलाश से विवाह करा देने पर सतोष भी है और असतोष भी। वह मन मे अनेक बार विचारता है कि उसने सुधा के व्यक्तित्व को खण्डित किया है, पर वह यह भी नही भूलता कि वह खुद निरुपाय है। जातिवाद, परम्परावाद और आदर्शवाद उसे निराश, कुण्ठित और पीडित होने से नही बचा सकते। उपन्यासकार नाटकीय शिल्प-विधि द्वारा इस रचना की एक-एक पक्ति पर व्यग्य करता है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि 'गुनाहो का देवता' शिल्प एव भाषा की दृष्टि से एक सफल रचना है।

'शैली ही व्यक्तित्व है' वाली बात पर यदि विश्वास किया जाय तो इतना निश्चित कहा जा सकता है कि भारती रोमेन्टिक किस्म के मानव हैं। 'सूरज का सातवा घोडा' के भाषा-शिल्प पर विचार करने से पूर्व हमे भारती की इन पक्तियो को देख लेना चाहिये ·

"इसकी कथा-शैली कुछ अनोखे ढग की है जो वास्तव मे बहुत पुरानी है, इतनी पुरानी कि आज के पाठक को थोडी नई या अपरिचित लग सकती है। बहुत छोटे से चौखटे मे काफी लम्बा घटनाक्रम और काफी विस्तृत क्षेत्र का चित्रण करने की विवशता के कारण यह ढग अपनाना पडा है।"[1]

---

१. 'सूरज का सातवा घोडा,' प्रथम स०, पृष्ठ ७

इसी का परिणाम है कि भारती ने अपने आप को वडी कुशलता से माणिक मुल्ला से अलग किया है। अत भारती अपनी कहानियो मे एक अत्यन्त सफल कलाकार की तरह तटस्थ और अनासक्त रह सके हैं। माणिक मुल्ला ने अपनी कहानी के वाद ही अलग वना लिये हैं और उन्होने मूर्त्ति पर इतने फूल चढाये हैं, इतने फूल चढाये हैं कि मूर्त्ति वेचारी दव कर रह गई है। कहानी पर टेकनीक के इतने पलस्तर है कि कहानी दुवक कर रह गई है और ये पलस्तर इतने कुशल हाथो से किये गये हैं कि कहानी और टेकनीक दोनो पर कुछ कहना खतरे और विवाद से खाली नही है।

'सूरज का सातवा घोडा' प्रतीकात्मक शिल्प-विधि की रचना है। माणिक द्वारा कही गई सात कहानिया मिलकर एक उपन्यास वन जाती हैं। भूमिका मे भारती ने स्पष्ट कर दिया है कि यह लघु उपन्यास है। लेखक की मौलिकता यही है कि उसने पुराने ढग मे शिल्प के माध्यम से मौलिकता की स्थापना की है।

'सूरज का सातवा घोडा' का शीर्षक भी प्रतीकात्मक है और यह केवल शीर्षक ही नही है, शीर्षक के साथ-साथ कथा-निर्वाह का भी सकेत है।

नैतिक विकृति की समस्या का समाधान भी भारती ने प्रतीकात्मक ढग से दिया है। अन्तिम कथा मे माणिक मुल्ला कहते हैं—"सूरज के घोडे वे हैं जो स्वप्न भेजते हैं, सूर्य को आगे वढाते हैं।"[1]

इस उपन्यास मे विचारो की वहुलता है। प्रत्येक कथा के पश्चात् दिया गया अनध्याय या विराम तो विचार-सामग्री जुटाता ही है, कथा के मध्य मे विद्यमान माणिक का प्रवचन भी कम महत्वपूर्ण नही है। कथा-प्रसग से परे हट कर वीच मे माणिक कहानी की टेक्नीक पर भी अपने विचार अभिव्यक्त करते हैं, शिल्प की दृष्टि से ये विचार अप्रासगिक और अस्वाभाविक हैं।

सभी कहानिया अपने एक हाथ से एक दूसरी को पकडे हुए हैं और दूसरे हाथ से एक मोटे रस्से को पकडे हुए हैं जिस रस्से मे सव लटकी हुई हैं—अर्थात् माणिक मुल्ला। इन सभी कहानियो से माणिक मुल्ला का प्रेम-सम्वन्ध है।

सवसे वडी वात है भारती का कहानी पर अधिकार। भारती की जव जैसी इच्छा होती है, वे कहानी को चलाते हैं, मोडते हैं, झटके देते हैं। कभी-कभी तो पाठको को आश्चर्य मे डालने के लिये ही वे यह ट्रिक अपनाते हैं। पहली और दूसरी दोपहर मे चाहे जहा से कहानी को शुरू कर देना, चाहे जहा वार्त्तालाप और किस्से डाल कर समाप्त कर देना इसके उदाहरण हैं। दूसरी दोपहर मे जमुना की

१ 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ १११

कहानी को समाप्त करके फिर शुरू कर देना, छठी दोपहर मे चेखव का उदाहरण देकर काले बेंट के चाकू को एक कहानी का केन्द्र-विन्दु बना डालना, विचित्र निष्कर्ष निकालकर पाठको को चमत्कृत कर देना या हँसा देना इस बात के प्रमाण है कि भारती का कहानी पर पूरा अधिकार है।

उपन्यास मे एकरसता या ऊब कही नही है, न शैली मे, न शिल्प मे। विविधता का आकर्षण अवश्य है। कहानिया तो अपने आप मे विविधभाषी है ही, कहानी के बाद आने वाले अनध्याय भी विविध-शिल्परूपात्मक है। इस कहानी मे वर्णनात्मक पद्धति है, दूसरी मे पारस्परिक वाद-विवाद का नाटकीय वर्णन है, तीसरी मे दारुण दु खान्त को सुनकर अर्द्ध-सुप्त मन मे असबद्ध स्वप्न विचारो का सिलसिला है। लेकिन अन्तिम अध्याय का जोड ठीक से नही बैठ पाया है। सातवें घोडे की कल्पना पूरी कहानी से उभर कर नही आती। कोई ऐसा सकेत भी कहानी से नही मिलता जो सातवें घोडे का अर्थात् जमुना, सत्ती और तन्ना के बच्चो के उज्ज्वल भविष्य का आभास देता हो।

समग्रत. सूरज का सातवा घोडा, प्राचीन लोक कथात्मक पद्धति का आधुनिक सस्करण है जिसमे शिल्प का ऐसा कुशल विनियोग हुआ कि यह लघु उपन्यास भी व्यापक विषय के विभिन्न पक्षो को अपने मे समेट पाने मे समर्थ हो सका। 'सूरज का सातवा घोडा' की प्रायोगिक शिल्प-नव्यता अपने आकर्षण के साथ विषय को भी ऊ चा उठाने मे समर्थ हो सकी है।

शिल्प की दृष्टि से यह नि सदेह हिन्दी उपन्यास-क्षेत्र मे अकेला है। काल्पनिक कथाकार माणिक को इस रूप मे चित्रित किया गया है कि उसके जीवन से सबधित इन कहानियो मे यथार्थ का भ्रम होने लगता है। शिल्प की दृष्टि से यह एक विशिष्ट प्रयोग है जिसका महत्व मात्र प्रयोग तक ही सिमटा हुआ नही है, जन-जीवन तक फैला हुआ भी है।

**मनोविज्ञान :**

चिन्तन के क्षेत्र मे विज्ञान के प्रवेश का अनिवार्य परिणाम है विश्लेषण की प्रवृत्ति। इसीलिए मनुष्य की आज तक की वैज्ञानिक प्रगति ने उसे हर क्षेत्र मे विश्लेषणात्मक चिन्तन की ओर अग्रसर कर रखा है। मनुष्य को समझने के लिए भी वैज्ञानिक प्रणाली का उपयोग किया गया है और इसी का परिणाम है मनोविज्ञान। जीवन मे प्रत्येक व्यक्ति को निरन्तर छोटे-बडे मानसिक सघर्षों से होकर गुजरना पडता है, उसके वास्तविक स्वरूप के परिज्ञान के लिए मनोवैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है। अतः आज के उपन्यास मनोविज्ञान की उपेक्षा नही कर सकते।

वाह्य जीवन मात्र के निरीक्षण से मानव-बुद्धि ने जो नियम और सिद्धान्त बना रखे हैं उनका निषेध कर, नवीन गूढतम सत्यो का अन्वेषण करना मनोविज्ञान का ध्येय है। सक्षेप मे, मन का वैज्ञानिक अध्ययन मनोविज्ञान के अन्तर्गत आता है। भारती के दोनो उपन्यासो मे यत्र-तत्र जाने-अनजाने मे मनोविज्ञान आया है। लेकिन मनोविज्ञान कही-कही ही आ पाया है क्योकि भारती के ये उपन्यास जैनेन्द्र की भाति मनोविज्ञान को दृष्टि मे रखकर नही लिखे गए है। फिर भी जो थोडा बहुत मनोविज्ञान आया है, उसका परिवेश द्रष्टव्य है।

बर्टी का चरित्र आन्तरिक अधिक है। एक स्थान पर वह चन्दर से कहता है, "माफ करना भाई। उससे मेरी शिकायत मत करना। असल मे ये गुलाब मेरी मृत पत्नी की यादगार हैं। जब इनका पहला पेड आया था तब मै इतना ही जवान था जितने तुम।"[1] गुलाबो का रिश्ता पत्नी से जुड गया है। मनोविज्ञान के अनुसार मन के तीन भाग किये गए हैं।

१ चेतन
२. अर्द्ध चेतन और
३ अवचेतन

बर्टी यह का अवचेतन मन गुलाब मे पत्नी की झलक देखकर सन्तुष्ट होने का यत्न करता है। बर्टी मे ही अवचेतन मन का एक और क्रिया-व्यापार देखिये जहा उसे फूलो मे पत्नी का एहसास ही नही होता बल्कि पत्नी का यथार्थ दर्शन भी होता है। बर्टी अपनी बहन से कहता है—"मै कितना अभागा हूँ, कितना अभागा! अच्छा पम्मी, कल रात को तुमने सुना था, वह आयी थी और पूछ रही थी, बर्टी तुम्हारी तबीयत अब ठीक है, मैने झट अपनी आख ढक ली कि कही आख का पीलापन देख न ले, मैने कहा–तबीयत अब ठीक है, मै अब अच्छा हूँ, तो उठी और जाने लगी।"[2]

क्रोचे ने कला को "एडस् टू मेमोरी" माना है जब कि मनोविज्ञान मे मानव के अवचेतन मे कोई भी स्मृति, प्रिय अथवा साम्य वाली वस्तु "एडस् टू मेमोरी" बन जाती है और इन फूलो ने बर्टी के लिए "एडस् टू मेमोरी" का ही काम किया है और बर्टी ने अपने माजी को पुन. जिया है। गुलाबो से बर्टी को प्यार होना मनोवैज्ञानिक महत्व इसलिए रखता है कि इनके साथ बर्टी के जीवन की एक बडी ट्रेजेडी गुथी हुई है।

---

१. "गुनाहो का देवता" दसवा स०, पृष्ठ ३१
२. "गुनाहो का देवता" दसवा स०, पृष्ठ ३६

सुधा और चन्दर के निश्छल सम्बन्ध जिन्हे वे लौकिकता की सीमा से उठकर मानते हैं वे भी अवचेतन मन की स्थिति को नही जानते। जब सुधा और चन्दर पम्मी के यहा जाते हैं तो पम्मी उन्हे एक गीत सुनाती है जिसे सुनकर सुधा वहा नही टिक पाती. वह घबरा जाती है और कहती है "चलो, चन्दर चले अब,'। उसने चन्दर का हाथ पकड कर खीच लिया। मिस पम्मी अब फिर कभी आयेंगे। आज मेरा मन ठीक नही है।"[1] वहा न रुक पाने का मनोवैज्ञानिक कारण यह है कि कोई भी प्रेयसी अपने प्रिय को दूसरे के स्नेह-सम्बन्धो में नही देख पाती और "फिर कभी आने" के सस्ते बहाने से अपने आप को मुक्त करने का अभिनय करती है।

एक बार पम्मी और चन्दर पिक्चर जाते हैं जहा पम्मी चन्दर को सेलामी की कहानी सुनाती है जिसका साराश है कि हैराद अपने भाई को मारकर भाभी से शादी कर लेता है। हैराद की भतीजी सेलामी बहुत सुन्दर कन्या है और सेलामी एक पैगम्बर से प्यार करती है। उधर हैराद सेलामी पर भी मुग्ध हो जाता है और पैगम्बर सेलामी के प्रणय को ठुकरा देता है। सेलामी प्रसिद्ध नर्तकी थी। एक बार वह हैराद के वचन पर नाची और पुरस्कार मे अपमान करने वाले पैगम्बर का सिर मागा। उसने सिर तो दिया पर राज्य पर कोई आपत्ति न आए इस कारण थोडे दिनो बाद सेलामी को भी मरवा दिया।

चन्दर को यह कहानी बहुत रुचती है। इसका कारण यह है कि हैराद यदि अपनी भतीजी तक पर मुग्ध हो सकता है तो चन्दर सुधा पर मुग्ध होकर कौनसा गुनाह करता है? इससे उसका मन आश्वस्त होता है और वह सुधा को भी यह पिक्चर दिखाने का विचार करने लगता है।

'गुनाहो का देवता' मे विशेषकर मनोविज्ञान बर्टी के चरित्र मे ही साकार हुआ है। इसका मूल कारण है बर्टी की विक्षिप्तावस्था। उसकी पत्नी के सार्जेन्ट के साथ चले जाने के बाद उसे दिल और भावना नाम की वस्तुओ से नफरत हो जाती है। लेखक की शब्दावली मे "आजकल वह दिल की शकल का एक पाननुमा दफ्ती का टुकडा काटकर उसमे गोली मारा करता है और जब किसी चिडिया वगैरह को मारता है तो शिकार को उठाकर देखता है कि गोली हृदय मे लगी है या नही।"[2] वह हृदय से नफरत करने लगता है और नर्तित क्षितिज की छाती भी उसे निर्मम लगने लगती है और जब वह अपने अतीत को जीता है तो पराजित होते हुए उसके भू-कपी पख रेशम के वन्ध्या वन को चीर कर सासें लुटाते हैं। बर्टी मे

१. "गुनाहो का देवता, दसवा स०, पृष्ठ १६५
२. "गुनाहो का देवता" दसवा स०, पृष्ठ १६२

गहरा मनोविज्ञान फिर देखिए 'अकेली लडकी नही, मिस्टर! मैं वहा से दो चीजें लाया हूं—एक तो यह तोते का बच्चा और एक यह जेनी, वही लडकी। तोते को मै बहुत प्यार करता हूँ, वह बडा हो जाएगा, बोलने लगेगा तो उसे गोली मार दूगा, और लडकी से मैं नफरत करता हूँ, उससे शादी कर लूगा।"[1]

प्यार का परिणाम मृत्यु और नफरत का परिणाम अपनत्व, मोटे रूप से विरोधी बाते लगती है पर गहराई मे जाकर यह विरोध सत्य मे परिवर्तित हो जाता है। इसका भी मूल कारण यही है कि वह भावना को, कैशोर्य, और कच्ची उम्र को नफरत से देखता है और आयु की एक सीमा विशेष गुजर जाने के बाद हमे बर्टी के कथन मे सत्य के दर्शन होने लगते हैं। पागल लगने वाला यह पात्र अपनी गहराई मे बडे मनोवैज्ञानिक अर्थ रखता है और इन विरोधो मे ही बर्टी इतिहास पुरुष के माथे के लेख-सा वृद्ध और जर्जर हो गया है। जिसमे जो कुछ है, अपना है जिसके जिस्म की खुदाई मे कोई खण्डहर नही मिल सकता।

इस प्रकार परिवेश के अनुकूल गुनाहो के देवता मे कही प्रसगवश मनोविज्ञान आ गया है लेकिन यह सत्य है कि इसमे मनोविज्ञान के चित्र बडे हल्के-फुल्के और रुपहले है।

'सूरज का सातवा घोडा' स्पष्ट और किस्सागोई की शैली मे लिखा गया एक विशिष्ट प्रयोग है जिसमे समाज के यथार्थ को लेखक ने बढिया ढग मे सवारा है। स्पष्टता होने के कारण उपन्यास मे साकेतिकता नही है और बिना साकेतिकता के, जैसा कि माना जाता है, मनोविज्ञान अपनी पूरी सीमाओ मे जीवित नही रह सकता। अत स्पष्ट है कि 'सूरज का सातवा घोडा' एक मनोवैज्ञनिक उपन्यास नही है और यदि इसमे मनोविज्ञान है भी तो वह काफी स्पष्ट और सतही है। लेकिन इन सबके बाद भी मनोविज्ञान एक ऐसा विषय है जिसे हर स्थान पर खोजा जा सकता है। 'सूरज का सातवा घोडा' का परिवेश निम्न-मध्यम-वर्ग का प्रेम है और प्रेम एक ऐसा विषय है जो मनोविज्ञान-रहित हो ही नही सकता।

उपन्यास का नायक है—माणिक मुल्ला। पूरा उपन्यास माणिक की कहानियो से सराबोर है। अत हमे सबसे पहले माणिक को ही अपनी दृष्टि-परिधि मे समेटना चाहिए।

खरबूजा काटते हुए माणिक कहते हैं—'प्यारे बन्धुओ! कहावत मे चाहे जो कुछ हो, प्रेम मे खरबूजा चाहे चाकू पर गिरे चाहे चाकू खरबूजे पर, नुकसान

---

१ वही, पृष्ठ २२८

हमेशा चाकू का होना है । अत. जिसका व्यक्तित्व चाकू की तरह तेज और पैना हो उसे हर हालत इस उलझन मे से बचना चाहिए ।"[१]

माणिक प्रेम से बचना चाहते है क्योंकि वे इस दर्द को जी चुके है। उनके मन के घाव शिराओ ने जिये है, इसीलिए भीतर कही बारूद ने पट बन्द कर लिए हैं और माणिक का सफा आग जीता रहा है। प्रेम मे यही सब कुछ होता है जिसे माणिक ने दर्शन की भापा मे अभिव्यक्ति दी है ।

माणिक जमुना के यहा नही जाना चाहते, फिर भी वे जाते है क्योंकि उनका स्वय पर काबू नही है ।

"दूसरे दिन माणिक मुल्ला ने चलने की कोशिश की, क्योंकि उन्हे जाने मे डर भी लगता था और वे जाना भी चाहते थे और न जाने कौन सी चीज थी जो अन्दर ही अन्दर उनसे कहती थी, माणिक यह बहुत ही बुरी बात है--जमुना अच्छी लडकी नही—और उनके ही अन्दर कोई दूसरी चीज थी जो कहती थी चलो माणिक ! तुम्हारा क्या बिगडता है । चलो देखें क्या होता है ?"[२]

माणिक का मन कही से भीतर ही भीतर कमजोर है जिसे माणिक स्वय नही जानते और 'देखे क्या होता है' के बहाने से स्वय को वहा ले जाते हैं; जबकि होना-जाना क्या है इसे माणिक बहुत अच्छी तरह से जानते है । फिर भी माणिक जाते हैं और सब कुछ जानने के बाद भी स्वय को नही रोक पाते । इस 'क्यो' की व्याख्या शब्द-विधान से बाहर की बात है जिसे पाठक के (और माणिक के भी) मन की अन्तरग परतें अच्छी तरह से जानती है । जाने के बाद वही सब कुछ होता है जिसका सदेह अवचेतन मे माणिक को पहले से ही था और माणिक जब वापस आने के लिए उठे तो जमुना कहती है—"रोज आओगे न ?" माणिक ने आनाकानी की तो जमुना ने कहा—देखो माणिक, तुमने नमक खाया है और नमक खाकर जो अदा नही करता उस पर बहुत पाप पडता है, क्योंकि ऊपर भगवान भी देखता है और वही मे दर्ज करता रहता है ।"[३]

नमक खाने की और उसे अदा करने की बढिया परम्परा का आश्रय लेती हुई जमुना अपने मन को आश्वस्त करती है और माणिक को रोज आने पर मजबूर कर लेती है । माणिक जाते रहते हैं, मनोविज्ञान के आश्रय मे जमुना अपना नमक लेती रही और एक दिन उसका विवाह हो गया और माणिक मुह ताकते रह गये ।

---

१. 'सूरज का सातवा घोडा' प्रथम स०, पृष्ठ ११
२. 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ २२
३. 'सूरज का सातवां घोड़ा', प्रथम स०, पृष्ठ २४

माणिक सत्य की कठोर जमीन भोगने लगे तब पता चला कि "भावना हमारे सामाजिक जीवन की खाद नही बन पाती, जि दगी उसे झाड-झखाड की तरह उखाड फेंकती है।"[1]

लिली की घटना का माणिक के साथ गहरा सम्बन्ध था। एक दिन लेखक पूछ बैठते हैं कि "इस घटना ने तो आपके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला होगा।" तो माणिक का उत्तर देखिए—"मनोवैज्ञानिको का कहना है कि छोटी से छोटी और बडी से बडी कोई घटना ऐसी नही जो आदमी के मन पर गहरी छाप न छोड जाय।"[2]

हर घटना मन पर अपना प्रभाव छोडती है। यह बात अलग है कि घटना पात्र-विशेष के जीवन से कितनी सम्बन्धित है। यदि घटना कही गहरी सम्बन्धित है तो उसका प्रभाव भी विशिष्ट होगा और घटना सामान्य है तो थोडी देर बाद ही पात्र अपने सामान्य जीवन मे सहजता से लौट आएगा। सत्ती की घटना माणिक के जीवन से धीरे-धीरे जुडती ही चली गई। यहा तक कि सत्ती उन्हें एक विश्वासपात्र मित्र तक मानने लग गयी। "माणिक मुल्ला की गिनती सत्ती, पता नही, क्यो अपने मित्रो मे करने लग गयी, एक ऐसा मित्र जिस पर पूर्ण विश्वास किया जा सकता है। एक ऐसा मित्र जिसे सभी साबुन के नुस्खे निःसन्देह बताये जा सकते है। जिसके बारे मे पूरा भरोसा था कि माणिक साबुन के नुस्खो को दूसरी कम्पनी वालो को नही बता देगा।"[3] सभी को माणिक पर इतना विश्वास क्यो हो गया, इसका कारण भी सत्ती नही जानती। यह ठीक वैसे ही है जैसे कभी कभी मूड बन जाने पर देर तक बेमतलब अनजानी राहो पर भटकने मे भी आनद आता है और लगता है कि मन काफी हल्का हो आया है अथवा यह मालूम होने पर भी सुबह जल्दी उठकर इस काम को पूरा करना है तब भी अलस भाव से उठ न पाना और देर तक जागती आखें लिये सोये रहना। ये मन की स्थितिया हैं जहा चेतन मन का क्रिया-व्यापार शिथिल हो जाता है और अवचेतन की सत्ता प्रबल हो उठती है। ठीक यही सत्ती के साथ होता है। माणिक के साथ तो ज़िन्दगी भर यही होता रहा है, अवचेतन प्रबल होकर फिर फिर अपनी सत्ता खोता रहा। फिर भी, माणिक ने 'जयवर्धन' की तरह बार बार स्वय को समझने का प्रयास नही किया है।

---

१ वही, पृष्ठ ६८

२ वही, पृष्ठ ८६

३ वही पृष्ठ ८६

**समस्याओं का आकलन**

भारती के दोनो उपन्यास सोद्देश्य लिखे गये उपन्यास हैं। भारती ने इन उपन्यामो मे हमारी कुछ समस्याओं को बड़े बढ़िया ढग से उठाया है। 'गुनाहो का देवता' मे तो एक मात्र समस्या है प्रेम की जिसे भारती की लेखनी ने इन्द्रधनुषी शैली मे सजाकर मन को धो देने वाले प्रसगो को समेट कर बड़े नाजुक अन्दाज मे प्रस्तुत किया है। लेकिन यह नाजुक अन्दाज उस दवा की गोली के समान है जो अपना आवरण तो मधुर रखती है पर जिसका भीतरी भाग अत्यन्त कटु होता है। प्रेम आज के जीवन का एक बदलता हुआ सत्य है जिसका अ कन भारती ने बदलते हुए सत्यो के साथ किया है। भारतीय समाज मे हमे 'प्रेम' शब्द पर भिन्न-भिन्न मत रखने वालो की नुमाइश आमानी से देखने को मिल सकती है। इस नुमाइश को भारती के उपन्यासो मे देखिए :

बर्टी जैसे प्रेम की चोट खाए हुए और विक्षिप्त मन:स्थिति वाले कितने प्राणी हमारे साथ हैं जो प्रेम के नाम पर बरबादियां ओढ लेते हैं और जीवन के गूढ सत्यो को अनजाने मे ही निरावरित करते रहते हैं ? समाज से उन्हे आक्रोश रहता है और उनका जीवन मात्र खाना-पूर्ति बन जाता है और विक्षिप्त-सा हो उठता है। इस विक्षिप्त स्थिति मे मानव का अवचेतन मन सजा और क्रियाशील रहता है। बर्टी भावना तथा वासना के द्वन्द्व मे फस जाता है और अपने घावो को कुरेद-कुरेद कर सुख पाने की चेष्टा करता है। पाठक के मन पर एक गहरी उदामी उतर आती है और प्रेम न जाने किन गर्तो मे तिरोहित हो जाता है। मानव क्या से क्या बन बैठता है। यहा तक कि इस बर्टी पर पम्मी को भी दया नही आती : 'लेकिन मैं सच कहती हूँ, वह बहुत गभीर हो गयी। मुझे जरा तरस नही आता इस पागलपन पर।"[1]

चन्दर का जीवन भी इसी प्रेम-समस्या से आच्छादित है। चन्दर जैसा पढा-लिखा प्राणी जो यह जानता है कि "जीवन को सुधारने के लिए आर्थिक ढाचा बदल देने भर की जरूरत नही है, उसके लिए आदमी का सुधार करना होगा""वह भी समझता था कि वह जिस तरह दुनिया का सपना देखता, वह दुनिया आज की किसी भी एक राजनैतिक क्रान्ति या किसी भी विशेष पार्टी की सहायता मात्र से नही बन सकती है।"[2] यह सब जानने वाला चन्दर जैसा प्राणी भी क्या बन बैठता है ? क्या हमारे समाज का छिपा हुआ एक वर्ग चन्दर नही है ? विनती के विवाह

---

१. "गुनाहो का देवता", दसवा स०, पृष्ठ ४०

२. वही, पृष्ठ, ६०–६१

की समस्या क्या आज के समाज की समस्या नही है ? कितनी विनतिया आज घर-घर मे बिनती का हृदय लिए उदास घडकनें गिन रही हैं और प्यार के नाम पर खून भीतर ही भीतर टूट कर जहरीला जानवर बन रहा है। आज समाज की स्थिति भी ठीक यही है, जहा मन मे तूफान है फिर भी ऊपर के आवरण से अपने आपको प्रसन्न रखने का छलावा मध्यम वर्ग की कौन लडकी नही करती ? किसनी गेसू प्यार के नाम की दुहाई देते-देते चुक गयी हैं। गेसू का प्यार जिसमे उसके प्रिय का छलाव है, यह छलाव समाज से दूर रहा कब है ? समाज इन्ही छलावो से भरा-पूरा है।

इन सबसे अलग समस्या है पम्मी जैसी औरतो के साथ। पम्मी चन्दर को मित्र बनाती है, उसे आदर्शों की सीख देती है और प्रेमियो मे एक निश्चित अलगाव और दूरी को अनिवार्य मानती है। लेकिन इस पम्मी का 'भीतर' ऊपरी आवरण से बिल्कुल विपरीत है। उसमे प्यार का आवरण है और उसकी वास्तविकता है वासना की तृप्ति, अपना उल्लू सीधा करने की भावना। पम्मी चन्दर से दूर जाते समय एक पत्र देकर जाती है जिसमे स्पष्ट लिखा हुआ है—"लेकिन मैंने कह दिया न कि मैं तुमसे छिपाउँगी नही। तुम इस भ्रम मे कभी मत रहना कि मैंने तुम्हे प्यार किया था। कल मुझे लगा कि मैंने अपने आप को आज तक धोखा दिया था...... प्यार जैसी गभीर खतरनाक तूफानी भावना को अपने कन्धो पर ढोने का खतरा देवता या बुद्धिहीन ही उठा सकते हैं।.......तुम मेरे योग्य नही, तुम अपने विश्वासो के लोक मे लौट जाओ।"[1]

पम्मी के कथन मे सत्य का कितना अ श है, हम लोगो से छिपा नही है। यह समस्या समाज के वर्ग-विशेष की अपनी समस्या है जिसे हम नकार नही सकते। जिन्दगी प्रेम के आदर्श और ढोग से नही ढोयी जा सकती और पम्मी की दृष्टि मे शायद इसीलिए हिन्दू, प्रेम के बजाय विवाह को अधिक महत्व देते हैं। परन्तु शायद इस बात को पम्मी भी नही जानती कि हिन्दुओं मे विवाह भी अपने आप मे एक समस्या है–जिस समस्या को बिनती का वर्ग भली-भाति जानता है, चन्दर और सुधा का वर्ग भली-भाति जानता है।

कुल मिलाकर "गुनाहों के देवता" मे प्रेम का अ कन एक विकट समस्या के रूप मे हुआ है और उस समस्या को ढोते-ढोते ही जीवन चुक कर रीत गया है।

"सूरज का सातवा घोडा" भी रोमाटिक कलाकार भारती की प्रेम से ही जुडी दूसरी कृति है जिसकी जमीन पहली कृति से बिल्कुल अलग है। अन्तर इतना ही है कि इसमे 'प्रेम' एक तीखी समस्या के रूप मे आया है जिस पर कोई आवरण

---

१ "गुनाहो का देवता" दसवा स०, पृष्ठ २०८

नही है। शुरू से अन्त तक समस्या अविराम चली है और अन्त मे थक कर, हार कर सुस्ताने बैठ गई है। लेकिन इसके बाद भी समस्या, समस्या ही रही है।

भारती ने 'सूरज का सातवा घोडा' की भूमिका मे कहा है कि "गुनाहो का देवता" के बाद यह मेरी दूसरी कथाकृति है। दोनो कृतियो में काल क्रम का अन्तर पडने के अलावा उन विन्दुओ मे भी अन्तर आ गया है जिन पर खडे होकर मैंने समस्या का विश्लेषण किया है।"[1] भारती ने स्पष्ट कहा है कि इसमे समस्याओ के बिन्दु "गुनाहों के देवता" के बिंदुओ से अलग और कटे हुए है। इस कटी हुई जमीन पर भारती ने पाव टिकाने का प्रयत्न किया है और मानव-जीवन की गहराइयो मे उतर कर नये मूल्यो की खोज की है, उन मूल्यो की खोज जो जीवन को समझने के लिए सही दृष्टि देते हैं। निम्न मध्य-वर्ग मे प्रेम की समस्या एक भयकर समस्या है। इस कृति मे प्रेम के अलावा, जिन्दगी, समाज, मानव-मूल्य, स्वतत्र-दृष्टि, और आत्मा की ईमानदारी प्रस्तुत हुई है जिन्हे एक साथ पाना बडा कठिन है। ये सब समस्याएं चिन्तन की भूमि में आकर पाठक को झकझोरती रहती हैं।

पहली प्रेम-कथा समाप्त होती है जमुना के वैधव्य मे। लेकिन हम जमुना के वैधव्य को पढकर उदास नही होते और न ही ये सोचते हैं कि जमुना पति की मृत्यु के बाद तागे वाले के साथ क्यो रहने लग जाती है। बल्कि हम यह सोचते हैं कि जमुना निम्न मध्यम-वर्ग की एक विवशता है। आज का यह वर्ग साहसी नही हैं, आदर्श-प्रेमी नही है, इस परिवेश और आयाम मे जमुना जो भी कुछ करती है सो गलत नही है, वास्तविक है। इस वास्तविकता के साथ ही व्यग्य के अनेक धरातल उभरते हैं। द्रष्टव्य है "देखिए असल मे इसकी मार्क्सवादी व्याख्या इस तरह हो सकती है। जमुना मानवता का प्रतीक है, मध्यवर्ग (माणिक मुल्ला) तथा सामन्त वर्ग (जमीदार) उसका उद्धार करने मे असफल रहते हैं। अन्त मे श्रमिक वर्ग (रामधन) उसको नयी दिशा सुझाता है।"[2] इस प्रकार प्रगतिवादी विचारको की कमजोरियो पर भारती ने व्यग्य को माध्यम बनाकर तटस्थता से दृष्टिपात किया है।

भारती के उपन्यास मे गुंथी ये कहानियाँ कही-कही विचित्र निष्कर्ष निकाल कर पाठको को चमत्कृत कर देती हैं या हँसा देती हैं। यह हँसना इसलिए नही है कि विचित्र या अप्रत्याशित निष्कर्ष देखकर हम सिर्फ हँस लें। यह हँसी सेटायर की हँसी है। एक निर्मम व्यग्यकार की जहर और कडवाहट मे बुझी तीखी हँसी है। जिस कहानी का निष्कर्ष है "खाओ बदन बनाओ" क्या यह निष्कर्ष माणिक के हृदय

---

१. "सूरज का सातवा घोडा" प्रथम स०, पृष्ठ, ७
२ "सूरज का सातवा घोडा" प्रथम स०, पृष्ठ ४३

को कचोटती कटुता, निराशा और कठोर वास्तविकता का पर्याय नही है ? ऊपर से वह चाहे कितना ही हल्का क्यो न लगे। "घोडे की नाल" के निष्कर्ष की ये पक्तिया '-इतनी बडी कोठी थी, अकेले रहना विधवा महिला के लिए अनुचित था, अत उसने रामधन को भी एक कोठरी दे दी और पवित्रता से जीवन व्यतीत करने लगी।"[1] एक दिन कहीं रेल-सफर मे माणिक को रामधन मिला। सिल्क का कुर्ता पान का डिब्बा, बडे ठाठ थे उसके। क्या आज के विधवा जीवन की तथाकथित पवित्रता की खिल्ली नही है ? क्या यह आज के समाज का नगा सत्य नही है ? क्या यह समस्या खण्डित वर्तमान मे सुलगी हुई नही है ? क्या श्याम का यह कथन कि "भाई हमारे चारो ओर दुर्भाग्य से नब्बे प्रतिशत लोग जमुना और रामधन की तरह के हैं,[2] सत्य नही है ? यदि है तो यह समस्या समाज के कितने बडे वर्ग की की समस्या है।

इन्ही समस्याओ की ऊबड-खाबड घाटियो मे ठोकरें खाते-खाते सूरज के सात घोडो मे से छ घोडो ने कन्धे डाल दिए हैं, अर्थात् हुआ यह है कि हमारे वर्ग-विगलित, अनैतिक, भ्रष्ट और अ घेरे जीवन की गलियो मे चलने से सूर्य का रथ काफी टूट-फूट गया है और वेचारे घोडो की तो यह हालत हो गई है कि किसी की दुम फट गयी है तो किसी का पैर उखड गया है, कोई सूखकर ठठरी हो गया है तो किसी के खुर घायल हो गये हैं। अब बचा है सिर्फ एक घोडा जिसके पख अब भी सावित हैं, जो सीना ताने गर्दन उठाये आगे चल रहा है। वह घोडा है भविष्य का घोडा, जमुना, तन्ना और सत्ती के नन्हे निरुपाय बच्चो का घोडा, जिनकी ज़िन्दगी हमारी ज़िन्दगी से ज़्यादा अमन-चैन की ज़िन्दगी होगी, ज़्यादा पवित्रता की ज़िन्दगी होगी, उसमे ज़्यादा प्रकाश होगा, ज़्यादा अमृत होगा। वही सातवा घोडा हमारी पलको मे भविष्य के सपने और वर्त्तमान के नवीन आकलन भेजता है ताकि हम वह रास्ता बना सकें जिस पर होकर भविष्य का घोडा आएगा, इतिहास के वे नए पन्ने लिख सकें जिन पर अश्वमेघ का दिग्विजयी घोडा दौडेगा। माणिक मुल्ला ने यह भी बताया कि "यद्यपि बाकी घोडे दुर्बल, रक्तहीन और विकलाग हैं पर सातवा घोडा तेजस्वी और शौर्यवान है और हमे अपना ध्यान, अपनी आस्था उसी पर रखनी चाहिए।"[3] सूरज के छह घोडो वाली ही स्थिति आज हमारे समाज की है, सातवा घोडा हमारे लिए आस्था का घोडा है जो समस्याओ की शृ खला से जकडा हुआ है।

इन समस्याओ के पथरीले बियावान मे भटकते-भटकते सूरज के छ घोडो की ही भाति आज का मध्यम वर्ग इतिहास-पुरुष के माथे के लेख-सा वृद्ध और मटमैला

---

१ "सूरज का सातवा घोडा" प्रथम स०, पृष्ठ ३८
२ वही, पृष्ठ २७
३ वही, पृष्ठ ११४

हो गया है और मध्यम वर्ग का अभिमन्यु सूनी-सूनी आखो से समस्याओ के व्यूह देखकर मन की अधेरी और गहरी दरारो मे चीखता रहा है—चीख जो समस्याओ की दुर्भेद्यता से टकरा-टकरा कर क्षितिज के अनजाने छोर मे जाकर मिलती रही है ।

**विचार–तत्व**

लेखन और विचार का परस्पर बहुत गहरा सम्बन्ध है । विचार-शृ खला ही लेखक को लिखने के लिए प्रेरित करती है । विचार युग के साथ-साथ परिवर्तित होते रहते हैं । इसी का परिणाम है कि हर युग के अपने मूल्य होते हैं और जब-जब विचारो मे परिवर्तन आता है तब तब स्थापित मूल्यो के लिए सकट उत्पन्न होता है । विचारो का सम्बन्ध युग-विशेष से होता है और उनका मूल्य भी युग-विशेष मे ही रहता है ।

उपन्यास मे भी विचार तत्व का बहुत महत्व है । विचारहीन उपन्यास तो सेमर के फूल की भाति छूछा होता है । विचारो का परिवेश से घनिष्ट सम्बन्ध होता है । पात्र जिस परिवेश मे रहता है उसका पात्र के विचारो पर लक्ष्यालक्ष्य रूप मे बहुत प्रभाव पड़ता है ।

भारती के उपन्यासो मे भी कुछ विचारणीय बातें है । ये विचार मध्य-वर्ग से सम्बन्धित हैं क्योकि भारती के सभी पात्र मध्य-वर्ग से हैं ।

डा० शुक्ला (सुधा के पिता) स्वभाव से गभीर और चिन्तनशील व्यक्ति हैं । इन दिनो वे जाति-व्यवस्था पर एक पुस्तक लिखने की बात सोच रहे हैं । इस बारे वे चन्दर से राय मागते है । चन्दर इस बात पर सहमत नही है और उसकी दृष्टि मे जाति-व्यवस्था का कोई महत्त्व नही है । चन्दर के इस दृष्टिकोण से परिचित होने के बाद डा० शुक्ला कहते हैं :—यही तो तुम लोगो मे खराबी है । कुछ थोडी सी खराबिया जाति-व्यवस्था की देख ली और उसके खिलाफ हो गए । हमारे भारत की प्राचीन सास्कृतिक परम्पराओ को तो बहुत ही सावधानी से समझने की आवश्यकता है । यह समझ लो कि मानव-जाति दुर्बल नही है । अपने विकास-क्रम मे वह उन्हीं सस्थाओ, रीति-रिवाजो और परम्पराओ को रहने देती है जो उसके अस्तित्व के लिए बहुत आवश्यक होती हैं ।"[1]

यह विचारणीय बात है कि क्या जाति-व्यवस्था हमारे लिए आवश्यक है अथवा हमे भी परम्परा से चले आते हुए इस आडम्बर को ओढना पडता है ? यह निर्विवाद सत्य है कि जाति मानव के हित के लिए एक वैज्ञानिक व्यवस्था है । इस स्थिति मे जाति-विशेष मे कुछ खराबिया देखकर उसके खिलाफ हो जाना अधिक

---

१ "गुनाहो का देवता", दसवा स०, पृष्ठ ६२

उचित नही है । जाति-व्यवस्था के इस विरोध का कारण यह है कि हम जाति को सकुचित अर्थ मे ग्रहण करने लग गए हैं। इसी का परिणाम है कि चन्दर जैसे शिक्षित लोग भी इस व्यवस्था के विरोध मे हैं । जाति व्यवस्था के विरोध के कारणो मे बुद्धसेन चतुर्वेदी निम्न तत्वो को प्रमुख मानते हैं ।[1]

१. वर्तमान शिक्षा प्रणाली का प्रभाव
२ औद्योगीकरण
३ व्यक्तिवादिता का उदय
४ प्रतिष्ठा का माप-दण्ड पैसा
५ स्त्रियो को समान अधिकार
६ आवागमन के साधनो मे उन्नति
७ शिक्षा का प्रसार
८ सुधार-आदोलन
९ राजनैतिक आन्दोलन
१० सरकारी हस्तक्षेप

डा० शुक्ला और चन्दर मे काफी बहस बढ जाने पर डा० शुक्ला कहते हैं · "ब्याह–शादी को कम से कम मैं भावना की दृष्टि से नही देखता । यह एक सामाजिक तथ्य है और उसी दृष्टिकोण से हमे देखना चाहिये । शादी मे सबसे बडी बात होती है सास्कृतिक समानता ।"[2] लेकिन यह बात भी चन्दर को नही रुचती क्योकि वह अतिरिक्त भावुक है। वस्तु सत्य यह है कि व्यक्तिगत भावना और सामाजिक तथ्य दोनो अलग-अलग तत्त्व हैं । भारतीय सस्कृति हमेशा सामाजिक तथ्यो को प्रधानता देती आई है कारण कि यह सस्कृति, व्यक्ति की सत्ता को समाज से पृथक् नही मानती । शादी मात्र वैयक्तिक सबध नही है, यह एक सामाजिक सबध भी है क्योकि शादी मे पति और पत्नी के सबधो के अतिरिक्त कुछ और भी सबध हैं जो सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं । अत शादी जैसे सामाजिक कार्य को भावना की दृष्टि से देखना उचित नही है ।

इसी सदर्भ मे एक और विचारणीय बात पम्मी हमारे सामने रखती है । एक बार पम्मी सुधा के यहा जाती है तो बातो ही बातो मे सुधा से कहती है "मेरा तो यह विचार है कि या तो लडकिया चौंतीस बरस के बाद शादिया करें जब वे अच्छा बुरा समझने के लायक हो जायें और नही तो मुझे तो हिन्दुओ का कायदा सबसे ज्यादा पसद आता है कि चौदह बरस के पहले ही लडकी की शादी कर दी जाये

१ "समाजशास्त्रीय सिद्धान्तो की विवेचना", बुद्धसेन चतुर्वेदी, पृष्ठ ५८ से ६१
२ "गुनाहो का देवता," दसवा सस्करण, पृष्ठ ६३

और उसके वाद उसका ससर्ग उसी आदमी से रहे जिससे उसे जिन्दगी भर निबाह करना है और अपने विकास-क्रम मे दोनो ही एक दूसरे को समझते चलें ।"[1]

पम्मी की विचारधारा सामाजिक दृष्टि से किसी सीमा तक सही है। चौदह वर्ष के पहले तक विचार विकसित नही हो पाते और विकसित होने की आयु मे लडके और लडकी को एक ही परिवेश मे पनपने देना भावी जिन्दगी के लिए हितकर है। लेकिन चौंतीस वरस के वाद शादी करने मे क्या तुक हो सकती है, मैं नही समझ पाया हूं। लगता है, चौदह वरस के पहले शादी कर देने वाली बात मे तो पम्मी पर हिन्दुओ का प्रभाव है और चौंतीस वरस वाद शादी वाली बात पम्मी का वैयक्तिक विचार है।

डा० शुक्ला जो जातिवाद के पक्षपाती हैं, सुधा की शादी के वाद जव वे सुधा की हालत देखते हैं तो कहते है : "इस महीने भर मे मेरा सारा विश्वास हिल गया। सुधा का विवाह कितनी अच्छी जगह किया गया, मगर सुधा पीली पड गई है। कितना दु ख हुआ देखकर। और विनती के साथ यह हुआ। सचमुच जाति, विवाह, सभी परम्पराएं वहुत ही वुरी हैं। वुरी तरह सड गई हैं। उन्हे तो काट फैंकना चाहिये। मेरा तो वैसे इस अनुभव के वाद सारा आदर्श ही वदल गया।[2]

इसका कारण यह नही है कि विवाह और सभी परम्पराए वहुत ही वुरी है, इसका कारण पम्मी के कथन मे ढूंढा जा सकता है। सुधा का विवाह उस उम्र मे किया गया जव कि उसकी निजी मान्यताएं पनप गई थी। वह चन्दर से अलग होना नही चाहती थी। यदि सुधा की शादी चौदह वर्ष की आयु से पहले कर दी जाती तो शायद डा० शुक्ला का आदर्श नही वदलता और यदि चौंतीस वरस के वाद की जाती तो क्या होता, मैं नही कह सकता।

पम्मी स्वतन्त्र विचारो की लडकी है। जब अन्त मे वह चन्दर से अलग होती है तो चन्दर को एक पत्र देकर जाती है। पत्र की कुछ पक्तिया द्रष्टव्य है · "उन्ही के पास क्यो जा रही हूं ? इसलिए, मेरे मित्र कि मैं अब सोच रही हूँ कि स्त्री स्वाधीन नही रह सकती। उसके पास पत्नीत्व के सिवा कोई चारा नही। जहा वह जरा स्वाधीन हुई कि वह उसी अन्ध-कूप मे जा पडती है जहा मैं थी। वह अपना शरीर भी खोकर तृप्ति नही पाती। फिर प्यार से तो जैसे मेरा विश्वास उठता जा रहा है, प्यार स्थायी नही होता। मैं ईसाई हूँ, पर सभी अनुभवो के वाद मुझे पता लगता है कि हिन्दुओ के यहा प्रेम नही वरन् धर्म और सामाजिक परिस्थितियो के आधार पर विवाह की रीति वहुत वैज्ञानिक और नारी के लिए सवसे ज्यादा

---

१. "गुनाहो का देवता", दसवा सस्करण, पृष्ठ ८७
२. "गुनाहो का देवता", दसवाँ सस्करण, पृष्ठ २७३-७४

लाभदायक है। उसमे नारी को थोडा बन्धन चाहे क्यो न हो लेकिन स्थायित्व रहता है।[१]

पम्मी के इस कथन पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दू विवाह पद्धति बहुत वैज्ञानिक और स्त्री के लिए हितकर है क्योकि हिन्दू समाज प्रेम को महत्त्व नही देता, धर्म और सामाजिक परिस्थितियो को महत्व देता है और इसी का परिणाम है कि सम्बन्धो मे स्थायित्व रहता है। आज अधिकतर लडकिया पम्मी जैसी ही स्थिति मे हैं। यह स्थिति विवाह द्वारा ही सुलझाई जा सकती है, प्रेम के द्वारा नही। प्रेम का सम्बन्ध भावना से है, और विवाह का समाज से। पम्मी की शब्दावली मे "विवाह मे भावना या आकर्षण अवसर जहर बिखेर देता है।"

"गुनाहो का देवता" मे प्रेम और विवाह पर पर्याप्त विचार किया गया है। विनती भी मध्य-वर्ग का एक विचारणीय प्रश्न है और गेसू भी। विनती और गेसू के माध्यम से उपन्यासकार ने मध्य-वर्ग मे फैले अन्धविश्वास को दूर करना चाहा है। गेसू अपने प्रिय द्वारा धोखा दिये जाने पर भी अपने प्रेम को पूजती है और अन्त तक पूजती रहती है। इस स्थिति मे प्रेम एक विचारणीय और गभीर प्रश्न बन जाता है जिसका उत्तरदायित्व अन्धविश्वास और निजी वैयक्तिकता पर है, समाज पर नही। उपन्यासकार शायद हमे यह सीख देना चाहता है कि अब युग बदल गया है और पुराने आदर्शो पर ज़िन्दगी नही चल सकती। अब हमे युग के उठते हुए तेज कदमो के साथ समझौता करना होगा।

"सूरज का सातवा घोडा" मे भी कुछ विचार-तत्वो का अकन हुआ है। ये विचार-तत्व मुख्यत कहानी मे न होकर कहानी के बाद दिए गए अनध्याय मे हैं। "सूरज का सातवा घोडा" की कहानिया निष्कर्षवादी कहानिया हैं और ये निष्कर्ष अपने आप मे विचारणीय तत्व हैं क्योकि ये निष्कर्ष हमारी ज़िन्दगी से निकट का सम्बन्ध रखने वाले हैं।

पहली कहानी के अन्त मे श्रोतागण माणिक से पूछते हैं कि इस कहानी का क्या निष्कर्ष निकला। माणिक जवाब देते हैं "बिना निष्कर्ष के मैं कुछ नहीं लिखता मित्रो ! इससे यह निष्कर्ष निकला कि हर घर मे एक गाय होनी चाहिये जिससे राष्ट्र का पशुधन भी बढे, सन्तानो का स्वास्थ्य भी बने, पडौसियो का भी उपकार हो और भारत मे फिर से दूध-दही की नदिया बहे।"[२] स्पष्ट है कि माणिक को प्राचीन मान्यताओं से लगाव है। नगरबोध के यान्त्रिक और नकली जीवन से ऊब कर माणिक आचलिकता मे लौट आना पसन्द करते हैं। दूसरी कहानी

१ "गुनाहो का देवता," दसवा सस्करण, पृष्ठ १०६

२ "सूरज का सातवा घोडा," प्रथम स०, पृष्ठ २६

के अन्त मे माणिक श्याम से कहते हैं : "देखो श्याम, भगवान जो कुछ करता है भले के लिए करता है। आखिर जमुना को कितना सुख मिला। तुम व्यर्थ मे दुखी हो रहे थे, क्यो ?[१]

कुछ लोग भाग्य मे विश्वास करते हैं और कुछ नही करते। भाग्यवाद की समस्या पर बहुत समय से विचार होता आ रहा है। भाग्यवाद को कुछ विद्वान ईश्वर से सम्बद्ध मानते हैं तो कुछ विद्वान ऐसे भी है जिन्हे ईश्वर की भी सत्ता मे विश्वास नही है। भाग्यवाद मे विश्वास न रखने वाले लोगो की मान्यता है कि भाग्य मनुष्य को कुछ नही करने देता और मनुष्य को एक निरीह प्राणी बना देता है।

माणिक भाग्य के प्रति आस्थावान हैं। वे भाग्यवादी लोगो की तरह यह मानते हैं कि मनुष्य को आस्थावान होना चाहिये। माणिक भी 'सशयात्मा विनश्यति' मे विश्वास रखते हैं और मानते है कि अल्लाह के दरबार मे सबके लिए बराबर न्याय है। अत आदमी को व्यर्थ मे दुखी नही होना चाहिये।

माणिक की ये सभी निष्कर्षवादी कहानिया अन्त मे हमे समाजोपयोगी निष्कर्ष देती हैं जो हमे रुचते इसलिए हैं कि ये हमारे लिए उपयोगी होते है। अन्त मे माणिक अपने कहानी-श्रोताओ को समझाते हुए कहते हैं · "यद्यपि इन्हे प्रेम कहानिया कहा गया है पर वास्तव मे ये "नेति-प्रेम" कहानियाँ है अर्थात् जैसे उपनिषदो मे नेति नेति कह कर ब्रह्म के स्वरूप का निरूपण किया गया है इसी तरह इन कहानियो मे यह प्रेम नही था, यह प्रेम नही था, यह भी प्रेम नही था, कहकर प्रेम की व्याख्या और सामाजिक जीवन मे उनके स्थान का निरूपण किया गया था। ...........जो प्रेम समाज की प्रगति और व्यक्ति के विकास का सहायक नही बन सकता वह निरर्थक है। यही सत्य है इसके अलावा प्रेम के बारे मे कहानियो मे जो कुछ कहा गया है, कविताओ मे जो कुछ लिखा गया है, पत्रिकाओ मे जो छापा गया है, वह सब रगीन झूठ है और कुछ नही।"[२]

भारती यहा आकर पाठक को प्रेम के अरण्य मे छोड जाते हैं और प्रेम के अरण्य मे खोया पाठक यहा आकर सोचता है कि क्या ये सब कहानियाँ प्रेम कहानिया नही है ? माणिक ने जो प्रेम किया वह तो समाज की प्रगति और व्यक्ति के विकास मे सहायक नही है। यदि यह प्रेम नही है तो आखिर है क्या ? अन्त तक पाठक इसी विचार मे उलझा रहता है। माणिक कहानिया समाप्त कर अपनी राह लेते हैं और पाठक इस अनसुलझे विचार को लिये बैठा रहता है।

---

१. वही, पृष्ठ ३८

२. "सूरज का सातवा घोडा" प्रथम स०, पृष्ठ ११२

स्वच्छन्दतावाद का आग्रह

हिन्दी का "स्वच्छन्दतावाद" शब्द अंग्रेजी के "रोमेन्टिसिज़म" का हिन्दी अनुवाद है। डा० कमल कुमारी जौहरी ने स्वच्छन्दतावाद की निम्न विशेषताएं मानी हैं।[1]

१ कल्पना की प्रधानता
२ भावना का अतिरेक एव प्रेम की प्रधानता
३ व्यक्तित्व का समावेश
४ प्रकृति-प्रेम
५ अतीत-प्रेम
६. सौन्दर्य-प्रेम और सौन्दर्य दृष्टि
७ साहसिकता तथा शौर्य का प्रदर्शन
८ असाधारण और अलौकिकता की ओर झुकाव एव जीवन की वास्तविकता से परे।
९ कौतूहल तथा औत्सुक्य की सृष्टि करने वाला
१० अभिव्यक्ति के क्षेत्र मे नियमो तथा रूढियो से मुक्त अत शास्त्रीयता के विरुद्ध।

ध्यान से सोचा जाय तो ये सभी विशेषताए वास्तव मे मानव की मूल प्रवृत्तियो से सम्बद्ध हैं। ये प्रवृत्तिया मनुष्य मे सदैव वर्तमान रहती हैं और उसके प्राकृतिक जीवन की स्वाभाविक अ ग हैं। अत यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावाद मानव की मूल प्रवृत्तियो का साहित्य है और इसलिये स्वच्छन्दनावाद साहित्य का अभिन्न अ ग है।

स्वच्छन्दतावाद मे पात्र प्राय व्यक्ति होते हैं, टाइप नही होते। व्यक्ति होने के कारण पात्र असाधारण अथवा विचित्र होते हैं। पात्रो मे सघर्ष वाह्य नही होता, आन्तरिक होता है। इसी का परिणाम है कि पात्र बुद्धिजीवी होते हैं और परम्पराओ के प्रति विद्रोही होते हैं।

स्वच्छन्दतावाद के लिए डा० कमल कुमारी जौहरी ने कहा है "स्वच्छन्दतावाद ऐसी अभिव्यक्ति है जिसमे आन्तरिकता का प्राधान्य है, जिसमे सचाई है, स्वाभाविकता है, स्वतन्त्रता है और सौन्दर्य है, जिसमे कोमल और उच्च भावनाओ का मर्मस्पर्शी चित्रण है, जिसमे कल्पना का साम्राज्य है, विषयो की अपरिमिति है, असाधारण, अद्भुत और अलौकिक की ओर रुचि है, तो सावारण का प्रेम भी है

१ "हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास," डा० कमल कुमारी जौहरी, प्रथम स०, पृष्ठ ३६

एव लोक-जीवन से निकटता की चाह भी, जिसमे व्यक्तित्व की सुरक्षा है, कलाकार के मुक्त जीवन की पुकार है, मानवता के हृदय का स्पन्दन है, सहानुभूति की तरलता और मानव के भावात्मक ससार की विजय का अमर सदेश है। ·· ·· स्वच्छन्दतावादी देश-काल, व्यक्ति की सीमा से परे है किन्तु जिसका अतिरेक वाद के रूप मे समय विशेष की वस्तु हो सकता है।"[१]

अव हमे भारती के उपन्यासो के परिप्रेक्ष्य मे स्वच्छन्दतावाद के इन तत्वो को देख लेना चाहिये। 'गुनाहो का देवता' एक प्रेम-कथा है जिसमे कल्पना और भावना का सुन्दर समन्वय हुआ है। सौन्दर्य-चित्रण और प्राकृति-चित्रण मे भी लेखक का मानस रमा है। अभिव्यक्ति के क्षेत्र मे लेखक रूढियो से मुक्त है और कुछ चरित्र व्यक्ति होने के कारण विचित्र और असाधारण भी है तो कुछ परम्परा-विरोधी और घोर वुद्धिजीवी भी हैं। पहले हम प्रकृति-चित्रण पर अपनी दृष्टि डालते है। चन्दर फूलो का वेहद शौकीन है अत, उसने सुवह घूमने के लिए अल्फ्रेड पार्क चुना है। इसी पार्क मे खिले हुए फूलो का वर्णन देखिये .

"पौधे की ऊपरी फुनगी पर मुस्कराता हुआ आसमान की तरफ मुह किये हुए यह गुलाव जो रात भर सितारो की मुस्कराहट चुपचाप पीता रहा है, यह अपनी मोतिया पाखुरियो के होठो से जाने क्या खिलखिलाता ही जा रहा है। जाने इसे कौन सा रहस्य मिल गया है। और वह नीचे वाली टहनी मे आधा झुका हुआ गुलाव, झुकी हुई पलको सी पाखुरिया और दोहरे मखमली तार-सी उसकी डण्डी, यह गुलाव जाने क्यो उदास है ? और यह दुवली-पतली लम्वी-सी नाजुक कली जो वहुत सावधानी से हरा आचल लपेटे है और प्रथम ज्ञात-यौवन की तरह लाज मे सिमटी, तो सिमटी ही चली जा रही है, लेकिन जिसके यौवन की गुलावी लपटें सात हरे परदो से झलकी ही पडती है, छलकी ही पडती है।'[२]

कुछ चरित्र व्यक्ति होने के कारण असाधारण भी हैं। वर्टी एक ऐसा ही चरित्र है जो अपनी असाधारणता के कारण पाठको को विस्मय मे डाल देता है। वर्टी परम्परा-विद्रोही भी है और वुद्धिजीवी भी। अतिरिक्त वुद्धिजीवी होने के कारण वर्टी विक्षिप्त मस्तिष्क वाला वन गया है। पम्मी और चन्दर जब पिक्चर जाते है तो पम्मी वर्टी से पूछती है कि क्या तुम भी चलोगे ? तो वर्टी का उत्तर देखिये ·

"हूँ, वर्टी ने सिर हिलाकर जोर से कहा—सिनेमा जाऊगा ? कभी नही। भूल कर भी नही। तुमने मुझे क्या समझा है ? मैं सिनेमा जाऊंगा ? धीरे-धीरे

१. 'हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास', डा० कमल कुमारी जौहरी, प्रथम स०, पृष्ठ ५०-५१

२ 'गुनाहो का देवता,' दसवा संस्करण, पृष्ठ २७-२८

उसका स्वर मंद पड गया "....अगर सिनेमा मे वह सार्जेन्ट के साथ मिल गई तो ? तो मैं उसका गला घोट दूंगा। अपने गले को दबाते हुए बर्टी बोला और इतनी जोर से दबा दिया अपना गला कि आखें लाल हो गई और खासने लगा।"[1]

यह सब जीवन की वास्तविकता से बहुत दूर की बात लगती है पर कौतूहल और औत्सुक्य की सृष्टि करती है। पाठक उत्सुकता के तन्तु-जाल मे फस जाता है कि देखें आगे बर्टी क्या करता है और अन्त मे बर्टी का क्या होता है ? इसी कौतूहल और औत्सुक्य की सृष्टि के लिए उपन्यासकार ऐसे चरित्रो का निर्माण करता है। ऐसा ही एक और कौतूहल-वर्द्धक बर्टी का कथन सुनिये। वह अपनी प्रेयसी को उसकी सालगिरह पर क्या उपहार देना चाहता है "कुछ नही आज इसकी सालगिरह थी। यह बोली मुझे कुछ उपहार दो। मैं बहुत देर सोचता रहा। क्या दू इसे ? कुछ समझ ही मे नही आता था। बहुत देर तक सोचने के बाद मैंने सोचा—मैं तो इसका पति होने जा रहा हूँ। इसे एक प्रेमी उपहार मे दू। मैंने एक मित्र से कहा कि तुम मेरी भावी पत्नी से आज शाम को प्रेम कर सकते हो। वह राजी हो गया। मै ले आया।"[2]

स्वच्छन्दतावाद मे कल्पना का बहुत अधिक महत्व है। भारती ने अपने उपन्यासो मे सजीव कल्पनाएं की हैं। सुधा चन्दर को इस समय कैसी लग रही है, इसके लिए चन्दर ने जो उपमान दिये हैं वे कल्पना की मुक्त उडान हैं · "चन्दर ने एक बार धुंधली रेशमी चादनी मे मुरझाये हुए सोनजुही के फूल जैसे मुंह की ओर देखा और सुधा के नरम गुलाबी होठो पर उंगलिया रख दी। थोडी देर वह आसू मे भीगे हुए गुलाब की दुःखभरी पाखुरियो से उंगलियां उलझाये रहा।"[3]

कल्पना की इन उडानो के बाद स्वच्छन्दतावाद की मुख्य प्रवृत्ति है अलौकिकता। चन्दर और सुधा का प्रेम कही भी स्वार्थपरक नहीं है, उनका प्रेम शुद्ध भावात्मक है जिसमे लौकिकता नही है। सुधा की शादी के बाद भी चन्दर सुधा से पृथक् नही हो सका है। सुधा के भावात्मक वियोग मे चन्दर कैसा अनुभव करता है, यह द्रष्टव्य है

"क्षितिज के पास एक बडा सितारा जगमगा रहा था चन्दर को लगा जैसे यह उसके प्यार का सितारा है जो जाने किस अज्ञात पाताल मे डूब गया था और आज से वह फिर उग आया है। उसने एक अन्धविश्वासी भोले बच्चे की तरह उस सितारे को हाथ जोडकर कहा—मेरी कचन जैसी सुधा रानी के प्यार, तुम कहाँ खो

१ 'गुनाहो का देवता,' दसवा स०, पृष्ठ ११६
 वही, पृष्ठ २३१
३ वही, पृष्ठ २४१

गये थे। तुम मेरे सामने नही रहे, मैं जाने किन तूफानों मे उलझ गया था। मेरी आत्मा मे सारी गुरुता सुधा के प्यार की थी।.....उसे याद आया कि एक दिन सुधा ने उसकी हथेलियों को होठो से लगाकर कहा था.......जाओ, आज तुम सुधा के स्पर्श से पवित्र हो...''[१]

यह सब कुछ वास्तविकता से परे की बातें लगती हैं पर कुछ भी हो, सुधा के इसी अलौकिक प्रेम मे चन्दर पला है और इसी मे चन्दर की आत्मा रमी है।

भारती की यह मान्यता रही है कि उपन्यास और कहानियो मे रोमास का अ श जरूर होना चाहिये। रोमास का इतना आग्रह इस बात को स्पष्ट करता है कि भारती के उपन्यासो मे स्वच्छन्दतावाद की प्रवृत्ति नि:सदेह प्रबल होगी। 'सूरज का सातवा घोडा' मे उपन्यास प्रारभ करने से पूर्व भारती कहते हैं: 'कहानियो मे रोमास का अ श जरूर होना चाहिये। लेकिन साथ ही हमे अपनी दृष्टि सकुचित नही कर लेनी चाहिये और कुछ ऐसा चमत्कार करना चाहिये कि वे समाज के लिए कल्याणकारी अवश्य हो।'[२]

'सूरज का सातवा घोडा' एक यथार्थवादी उपन्यास है। अत: इसमे कल्पना और भावुकता को अधिक स्थान लेखक ने नही दिया है। फिर भी लेखक यत्र-तत्र अपने स्वभाव के अनुसार कल्पना को छोड नही पाता· "मैं बहुत उदास होकर लेट जाता हूँ। नीम पर से नीद की परिया उतरती हैं, पलको पर छम, छम, छम नृत्य करती हैं।'[3] यथार्थ परक कृति होने के बाद भी इसमे प्रेम का वर्णन हुआ है। माणिक लिली के प्रेमी हैं। माणिक का एक प्रणय-दृश्य देखिये: "माणिक के पावो पर टप से एक गरम आसू चू पडा तो उन्होंने चौंककर देखा। लिली के पलको मे आसू छलक रहे थे। उन्होने हाथ पकड कर लिली को पास खीच लिया और उसे सामने बिठाकर, उसके दो नन्हे उजले कबूतरों जैसे पावों पर उंगली से धारिया खीचते हुए बोले—छि·! यह सब रोना-धोना हमारी लिली को शोभा नहीं देता।"[४]

"सूरज का सातवा घोडा" मे छह यथार्थपरक कहानियो के बाद लेखक अन्तिम कहानी पर आता है जहा वह भविष्य के प्रति हमे आश्वस्त कराना चाहता है और अलौकिकता का सहारा लेते हुए हमे धैर्य रखने की शिक्षा देता है और कहता

---

१. 'गुनाहो का देवता,' दसवा स०, पृष्ठ ३२२-२३
२. "सूरज का सातवा घोडा', प्रथम स०, पृष्ठ ११
३. वही, पृष्ठ ४४
४. वही, पृष्ठ ७१

है "पर कोई न कोई ऐसी चीज है जिसने हमे हमेशा अधेरा चीरकर आगे बढने, समाज-व्यवस्था को बदलने और मानवता के सहज मूल्यो को पुन स्थापित करने की ताकत और प्रेरणा दी है। चाहे उसे आत्मा कह लो चाहे कुछ और। और विश्वास, साहस, सत्य के प्रति निष्ठा उस प्रकाशवादी आत्मा को उसी तरह आगे ले चलते हैं जैसे सात घोडे सूर्य को आगे बढा ले चलते हैं।"[1]

यथार्थपरक कृति होने के कारण स्वच्छन्दतावादी सभी प्रवृत्तिया 'सूरज का सातवा घोडा' मे नही मिलती, पर 'गुनाहो का देवता' एक शुद्ध भावपरक प्रेम कथा है जहा स्वच्छन्दतावाद की सभी प्रवृत्तिया स्वच्छन्दता के साथ सासें ले रही हैं।

**प्रेम और यौन भावना**

हर युग के साहित्य मे यौन भाव का चित्रण हुआ है। यौन भाव साहित्य से दूर रहा ही कब है? प्राचीन साहित्यकारो ने भी इसका वर्णन किया है पर रहस्यवाद के आवरण मे। अन्तर इतना ही है कि प्राचीन लेखक आवरण मे कहते थे और आज का लेखक जो भी कहना है वह आग के साथ कहता है—आग, जिस पर कोई आवरण टिक नही सकता।

मनोविज्ञान मे यौन भाव का बहुत ही अधिक महत्व है। फ्रायड तो इसे (सैक्स) मनोविज्ञान का मूलाधार मानता है। प्रेम बहुत व्यापक तत्त्व है, यौन भाव तो प्रेम का एक अग मात्र माना जा सकता है लेकिन हम किसी भी दृष्टि से इस अग को गौण नही कह सकते। प्रेम आध्यात्मिक स्तर पर होता है और यौन भाव (सैक्स) शारीरिक स्तर पर। सैक्स मे शरीर की वे भावनाए आती हैं जिनकी परस्पर पूर्ति विपरीत लिंगी मानवो द्वारा ही सभव है। कुछ विद्वान यौन-वर्णन को साहित्य मे अनैतिक समझ कर उसे त्याज्य मानते हैं। पर साहित्य तो अपने आपको पहचानने की एक प्रक्रिया है। सैक्स मनुष्य के जीवन का अभिन्न अग है, इसे भी यदि वह साहित्य के माध्यम से पहचानने का यत्न करे, तो शायद वह गलत नही करता है और नैतिकता इत्यादि की मान्यताए जो थी अथवा अब भी हैं, के लिए आज के साहित्य ने सकट उत्पन्न कर दिया है। अत. यह आवश्यक है कि हम इसे मानें या न मानें, लेकिन समझ जरूर लें।

आदमी सैक्स से दूर रह पाये, यह आदमी के लिए सभव नही है। यदि सभव है तो वह आदमी नही है आदमी से बढकर कुछ और है। सैक्स प्रकृति का सहज सत्य है जिसका अनुकरण मानव करता आया है और करना आवश्यक भी है। इसी सैक्स को भारती ने देखिये किन किन अन्दाजो मे, किन किन परिवेशो मे और किन किन रगो मे प्रस्तुत किया है।

---

१ 'सूरज का सातवा घोडा,' प्रथम स०, पृष्ठ ११४

एक स्थान पर प्रमिला चन्दर से कहती है, "तो यह सैक्स है! आदमी को कहा ले जाता है, यह अन्दाज़ भी नही किया जा सकता। तुम तो अभी बच्चे की तरह भोले हो और ईश्वर न करे तुम कभी इस प्याले की शरबत चखो।"[1]

सैक्स की अनुभूति के क्षणो मे आदमी इन्सानियत से दूर होता है कारण कि इस आवेश मे वासना ही वासना है। भारती का हर पात्र वासना की इन विथियो मे भटकता रहा है। 'सैक्स मानव जीवन का अन्तिम सत्य है'—बर्टी का पागलपन मे कहा गया यह कथन बडा मनोवैज्ञानिक अर्थ रखता है और इस बात को स्पष्ट करता है कि लडकियो के जीवन मे सबसे अधिक आवश्यक वस्तु है सैक्स। बर्टी का यह कथन देखिये, "अगर दिल से प्यार करना चाहते हो कि वह लडकी जीवन भर तुम्हारी कृतज्ञ रहे तो तुम उसकी शादी करा देना ...... यह लडकियो के सैक्स जीवन का अन्तिम सत्य है।"[2]

चन्दर सुधा से प्यार करता है, सुधा के साथ सैक्स की भावना को उसने कही भी स्थान नही दिया है, उसका प्रेम आध्यात्मिक धरातल को छूता है और इसी धरातल पर चन्दर जीता है, लेकिन चन्दर का यह देवत्व भी इस सैक्स के सामने आकर पारे के (पारद) कणो सा बिखर जाता है और यह सैक्स ही है जिसने चन्दर को 'देवता' से 'गुनाहो का देवता' बना दिया है। सुधा को अपनी अभिन्न प्रेयसी मानने वाला चन्दर भी सुधा के लिए यह सोचने को मजबूर हो जाता है कि "त्याग, साधना, सौन्दर्य सब झूठ है। सुधा भी अन्ततोगत्वा वही साधारण लडकी है जो कुआरे जीवन मे पति और विवाहित जीवन मे प्रेमी की भूखी होती है।"[3]

सैक्स का त्याग उन महात्माओ के लिए सभव है जो इस जगत् को मिथ्या मानते हैं और आध्यात्मिक नेत्र खोलकर परमात्मा से एकाकार हो जाते है मगर यान्त्रिक तनावो मे से गुजरती हुई जिन्दगी मे जहा रोज नये रिश्तो की कल्पनाओ मे मानव ढलता चला जा रहा है, इस तनाव, कुण्ठा और सन्त्रास के युग मे सैक्स मानव के लिए उतना ही आवश्यक है जितनी कि अन्य आवश्यक बाते। पम्मी से कहा गया चन्दर का यह कथन इस सन्दर्भ मे द्रष्टव्य है 'हा मैं देख रहा हूँ, सैक्स लोगो को उतना बुरा नही लगता, जितना मैं समझता था। नही चन्दर, सिर्फ इतना ही नही, मान लो जैसे आजकल तुम उदास हो और मैं तुम्हारा सिर इस तरह अपनी गोद मे रख लूं तो कुछ सन्तोष नही होगा तुम्हे ?

---

१. 'गुनाहो का देवता,' दसवा स०, पृष्ठ ११८
२. वही, पृष्ठ २३२
३. वही, पृष्ठ २३५

क्यो पम्मी, तुम एक लडकी हो मैं तुम्ही से पूछता हूँ, क्या लडकियो को प्रेम मे सैक्स अनिवार्य है ?

'हा'। पम्मी ने स्पष्ट स्वर मे जोर देकर कहा।

लेकिन पम्मी मैं तुमसे नाम तो नही बताऊगा, लेकिन एक लडकी है जिसको मैंने प्यार किया है पर वह शायद मुझसे शादी नहीं कर पायेगी। मेरे उसके कोई शारीरिक सम्बन्ध भी नही हैं। क्या तुम इसे प्यार नही कहोगी ?

कुछ दिन बाद जब उस लडकी की शादी हो जाये तब पूछना, तुम्हारा सारा प्रेम मर जायेगा। पहले मैं भी तुमसे कहती थी, पुरुष और नारी के सम्बन्धो मे एक अन्तर जरूरी है, अब लगता है यह सब भुलावा है।

लेकिन दूसरी बात तो सुनो। उसी की एक सखी है वह जानती है कि मैं उसकी सखी को प्यार करता हूँ, उसे नही कर सकता। कही सैक्स की तृप्ति का कोई सवाल नही, फिर भी वह मुझे बहुत प्यार करती है। उसे तुम क्या कहोगी ?

और यह दूसरे ढग की परिस्थिति है। देखो कपूर, तुमने हिप्नोटिज्म के बारे मे नही पढा। ऐसा होता है कि अगर कोई हिप्नोटिज्म एक लडकी को हिप्नोटाइज कर रहा है और बगल मे दूसरी लडकी बैठी है, जो चुपचाप देख रही है तो वातावरण के प्रभाव से अक्सर ऐसा देखा जाता है कि वह भी हिप्नोटाइज हो जाती है।"[1]

भारती मे सैक्स कितना खुला हुआ है। भारती के पात्र नहीं मानते कि सैक्स कोई गोपनीय वस्तु है। वे इस पर उसी प्रकार विमर्श करते हैं जैसे जीवन के अन्य आवश्यक-प्रसगो पर किया जाता है। सैक्स के विकृत होने का मूल कारण ही यही है कि हम सैक्स को हीन दृष्टि से देखते हैं, उसे अनैतिक मानकर अन्यो से छिपाने का यत्न करते हैं। सैक्स को भारती के पात्रो ने एक चुनौती दी है और यह बात बडे खुले रूप से अपने पाठको में उछाल दी है कि सैक्स घृणित कर्म नही है। यह वही सब कुछ है जो हमारे जीवन का सत्य है, जिसकी वास्तविकता परम्परागत सदर्भों मे नही समझी जा सकती।

पम्मी ने सैक्स पर सबसे अधिक दृष्टि डाली है क्योकि इस आयाम से वह गुजरी हुई है। वह ईसाई है और उसने सर्वत्र सैक्स को महत्व दिया है। आत्मा नाम की किसी वस्तु मे उसकी आस्था नही है। उसकी दृष्टि मे सुधा मात्र एक छोकरी है जिसकी आखें सुन्दर हैं। वह जिन्दगी को बहुत करीब से देखने का प्रयत्न करती है। इसीलिए वह सैक्स की गहराइयो तक पहुच पाने मे समर्थ हुई है।

---

१. गुनाहो का देवता,' दसवा स०, २६५-६६

चन्दर जो सैक्स इत्यादि से अपरिचित था उसे पम्मी ही सैक्स के अनुभव देती है। सुधा का चन्दर जो आध्यात्मिक धरातल पर पला है पम्मी के साथ उसी का रूप देखिये जो सैक्स पर चन्दर के विचारो को स्पष्ट कर पाने मे समर्थ है।

"पम्मी ने उसे अपने वक्ष पर खीच लिया और उसके बालो से खेलने लगी। चन्दर थोडी देर चुप लेटा रहा, फिर पम्मी के गुलाबी होठ पर अगुली रखकर बोला—तुम्हारे वक्ष पर सिर रखकर मैं जाने क्यो सब भूल जाता हूँ। पम्मी, दुनिया वासना से इतनी घबराती क्यो है ? मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि अगर किसी को वासनाहीन प्यार करके, किसी के लिए त्याग करके, मुझे जितनी शान्ति मिलती है, पता नही क्यो, मासलता मे भी उतनी ही शान्ति मिलती है। ऐसा लगता है कि शरीर के विकार यदि आध्यात्मिक प्रेम मे जाकर शान्त हो जाते हैं तो लगता है अध्यात्म-प्रेम मे प्यासे रह जाने वाले अभाव फिर किसी के मासल बन्धन मे ही आकर बुझ पाते है। कितना सुख है तुम्हारी ममता मे।"[1]

इस सब का तात्पर्य यह नही कि औरत अथवा सैक्स अपने आप को भुलाने का एक माध्यम है। नही, यह अनुभव है जो आदमी को आदमी बनाता है, अपने आपको पहचानने के लिए मजबूर कर देता है, द्वन्द्व मे जी कर निर्णय के निकष पर अपने आपको कसने के लिए बाध्य कर देता है और हमारे सामने यह प्रश्न खडा कर देता है कि क्या सैक्स त्याज्य है, क्या सैक्स अमानवीय है, क्या सैक्स को जानना जरूरी नही है ? कभी कभी यही सैक्स हमदर्दी और सात्वना का साधन बन जाता है। कभी कभी सैक्स का प्रयोग वासना-पूर्ति के लिए ही नही, दु ख को भुलाने के लिए भी किया जाता है कि मानव इसके माध्यम से पुनः अपने आपको सन्तुलित महसूस करे। चन्दर के जीवन मे सैक्स ने यही किया है। इसी सैक्स ने चन्दर की आखे खोली है, इसी के माध्यम से चन्दर ने अपने आप को पहचाना और सन्तुलित किया है।

लेकिन प्रेम को सैक्स की सीमित दृष्टि से नही पहचाना जा सकता। प्रेम को पहचानने के लिए दृष्टि की उदारता आवश्यक है। प्रेम मे आनन्द का वह स्रोत है जिसमे मन के विचार, सशय इत्यादि सब घुल जाते हैं। प्रेम की भावना इतनी विस्तृत है कि समस्त विश्व को अपने मे समेट पाने मे समर्थ है और इस जन्म तक ही नही, जन्म-जन्मान्तरो तक स्थापित रहने वाली है। नारी और पुरुष मे प्रेम एक स्वाभाविक तत्व है। प्रेम मे कई बातो की प्रधानता होती है। डा० सुरेश सिन्हा ने इसे इन बिन्दुओ मे अकित किया है।[2]

---

१. "गुनाहो का देवता" दसवा स०, पृष्ठ २७७

२. "हिन्दी उपन्यासो मे नायिका की परिकल्पना" प्रथम स., पृष्ठ १२३

१ प्रेम मे त्याग की प्रधानता
२ परिस्थितिवश प्रेम का दमन
३. प्रेम का अन्त विवाह मे कल्पित करना
४ प्रतिहिंसा की भावना से प्रेरित प्रेम
५ प्रेम मे सैक्स की प्रधानता
६ प्रेम और आदर्श का सघर्ष
७ स्वार्थ भावना से प्रेरित प्रेम
८ प्रेम की अनिश्चयात्मक स्थिति

ये सब बिन्दु प्रेम के अर्थ-सकोच का परिणाम हैं। इसके विपरीत भारती को यह सकोच स्वीकार नही हैं। वे प्रेम की उदारता और स्वच्छन्दता मे विश्वास रखते हैं। एक स्थान पर पम्मी चन्दर से कहती है—

"कितना अच्छा हो अगर आदमी हमेशा सम्बन्धो मे एक दूरी रखे, सैक्स न आने दे। ये सितारे हैं, देखो कितने नज़दीक हैं, करोडो बरस से साथ हैं लेकिन कभी भी एक-दूसरे को छूते तक नही, तभी तो सग निभ जाता है। बस ऐसा हो कि आदमी प्रेमास्पद को निकट लाकर छोड दे। उसको बाधे न। कुछ ऐसा हो कि होठो के पास खीच कर छोड दे।"[1]

पम्मी का यह कथन भारती के हर पात्र पर लागू होता है। सुधा और चन्दर के प्रेम का रूप भी यही है। वे एक-दूसरे को अपने तन, मन और आत्मा से चाहते हैं फिर भी एक दूरी है, दूरी जिसे तकल्लुफ की दीवार नही कहा जा सकता। चन्दर सुधा को आत्मा के रेशे-रेशे से प्यार करता हैं पर इस प्यार मे भी एक अलगाव है जो पाठक के मन को गुदगुदा कर प्रेम की समस्या मे लपेट लेता है। यह समस्या भी ऐसी है कि सुलझाए नही सुलझती। सुधा का जो रूप निर्मित हुआ है उसका मूल कारण ही प्रेम है। सुधा सैक्स को महत्व नही देती। चन्दर को परेशान देख कर सुधा कहती है कि "यह तो अच्छा है कि वह सब जिसे तुम सैक्स कहते हो वह सम्बन्धो मे न आये। इसमे बुराई क्या है ?"[2] स्पष्ट है कि भारती के पात्र प्रेम और सैक्स को दो भिन्न स्थितियो के रूप मे जानते हैं। प्रेम मे केवल एक से ही सम्बन्ध सम्भव है, इसमे प्रिय का महत्व स्वय ही बढ़ जाता है। इसीलिए तो चन्दर की हर धडकन सुधा का नाम गिनती है और सुधा के मन का हर रेशा चन्दर को पाने के लिए विकल है। प्रेम एक विकल्प है जिसे अनुभव से ही पहचाना जा सकता

---

१ "गुनाहो का देवता", दसवा, स० पृष्ठ १२१
२ वही, पृष्ठ १२४

है। यही प्रेम है जहा दुर्वासा का शाप भी आकर तूरे सहर मे ढल जाता है, अन्धेरे के हजारों सूरज एक साथ बुझ जाते है, सासो के काफिले मे दर्द की भाप थम जाती है और प्रेमी को धड़कनो की ऊष्मा जीवन का सगीत सिखा देती है।

भारती के पात्र प्रेम के लिए प्रेम नही करते, उनके कुछ पात्र प्रेम के माध्यम से स्वय को पहचानते हैं, समाज को पहचानते हैं। यह बात अलग है कि चन्दर अथवा सुधा अपने प्रेम मे सफल हो पाते हैं या नही। माणिक मुल्ला ने तीन लडकियो से प्रेम किया है, लेकिन उन लडकियो के माध्यम से माणिक निम्न-मध्य-वर्गीय समाज का एक चित्र हमारे सामने मूर्त कर देते हैं।

"उपन्यास से पूर्व" मे भारती माणिक का कथन उद्धृत करते हैं—

"प्यारे बन्धुओ, कहावत मे चाहे जो कुछ हो, प्रेम मे खरबूजा चाहे चाकू पर गिरे चाहे चाकू खरबूजे पर, नुकसान हमेशा चाकू का ही होता है। अत जिसका व्यक्तित्व चाकू की तरह तेज और पैना हो, उसे हर हालत मे इस उलझन से बचना चाहिये"[१]

सैक्स और प्रेम का चित्रण करने मे भारती पूर्ण समर्थ हैं। वे इसके जितने हल्के-फुल्के चित्र दे सकते हैं, उतने ही वजनी और ठोस चित्र देने मे भी भारती समर्थ है। भारती ने "गुनाहो के देवता" मे इसके जितने हल्के-फुल्के चित्र दिये हैं "सूरज का सातवा घोडा" मे उतने ही ठोस और वज़नी चित्र भी अकित किए हैं।

भारती ने कई स्थानो पर वासना और प्रेम में द्वन्द्व स्थापित कर पात्र के सामने सकट उत्पन्न कर दिया है और इस द्वन्द्व के कारण ही पात्र अपने अटल ध्रुव से बार बार डोल जाता है। चन्दर की यही स्थिति होती है, माणिक की भी यही स्थिति होती है। अन्तत. उनके पात्र वासना मे भटकते हैं, फिर वासना मे प्रेम ढूढते हैं। पात्रो की यह भटकन ही इतनी शक्तिशाली है कि पाठक को झकझोर जाती है।

भारती का सेक्स और प्रेम-वर्णन समाज के नग्न यथार्थ को मूर्त करने मे समर्थ है। माणिक का एक कथन देखिए : "देखो, ये प्रेम कहानिया वास्तव मे प्रेम नही वरन् उस ज़िन्दगी का चित्रण करती हैं जिसे आज का निम्न-मध्यवर्ग जी रहा है। उसमे प्रेम से कही ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है आर्थिक सघर्ष, नैतिक विश्रृ खलता। इसीलिए इतना अनाचार, निराशा, कटुता और अधेरा मध्यवर्ग पर छा गया है।"[२]

---

१. 'सूरज का सातवां घोडा', प्रथम सं०, पृष्ठ ११
२. 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम सं०, पृष्ठ ११३

# 5 भारती के उपन्यास : एक मूल्यांकन

अपने समकालीनो की तुलना मे भारती ने बहुत कम लिखा है—लगभग बीस वर्ष के लेखन-काल मे दो उपन्यास और बीस-तीस कहानिया। भारती के दोनों उपन्यास 'गुनाहो का देवता' एव 'सूरज का सातवा घोडा' प्रेम पर आधारित हैं।

• 'गुनाहो का देवता' की कथा को लेखक ने बडे कोमल शब्दो मे सजाया है। चन्दर और सुधा प्यार की उत्ताल तरगो पर नाचते रहते है। रोज नया पागलपन, खूबसूरत सुबह और सन्ध्या की मासूम गहरी घाटियो मे चन्दर और सुधा मिलन के ताने-बाने बुनते रहते हैं। आज के इस यान्त्रिक युग मे भला पाठक कब तक इस रेशमी धोखे का साथ दे? इसी का परिणाम है कि चन्दर मात्र सुधा का बनकर रह गया है, पाठको का नही बन पाया है।

'गुनाहो का देवता' की कथा (जो चन्दर और सुधा के प्रणय की कथा है) के प्रति लेखक बडा सजग रहा है। पम्मी और बिनती की सृष्टि चन्दर के चरित्र पर प्रकाश डालती है गेसू की सृष्टि सुधा के चरित्र पर प्रकाश डालती है। डा० शुक्ला, बर्टी, बिसरिया, बुआजी, महाराजिन आदि के वर्णनो मे भी लेखक रमा है लेकिन मूल कथा-तन्तु को कही भी विलीन नही होने दिया है। मूल कथा के सम्बन्ध मे लेखक उतना ही सजग है जितना चोर चोरी करते समय रहता है।

पात्र-सृष्टि मे भी लेखक की निपुणता झलकती है। अनावश्यक पात्र यहा नही है। जितने भी हैं वे आवश्यक हैं, क्योकि उपन्यास समग्र जीवन का दृश्य होता है जिसे सहजता से परखने के लिए टाइप और व्यक्ति दोनो ही तरह के चरित्र आवश्यक है। बर्टी, पम्मी आदि व्यक्ति-चरित्र हैं और गेसू, सुधा, चन्दर, बिनती आदि टाइप-चरित्र हैं।

मनोविज्ञान का प्रयोग हुआ है बर्टी, पम्मी और चन्दर के चरित्र मे। शिल्प मे यहां नाटकीय शिल्प का प्रयोग है। शिल्प बडा घिसा-घिसाया है। नावीन्य की सृष्टि शिल्प मे नही हो पाई है।

पूरा उपन्यास पढ डालने के बाद ऐसा लगता है कि 'गुनाहो का देवता' कच्ची उम्र के पाठक की कृति है, जिसमे कैशोर्य-भावुकता आवश्यकता से अधिक है, इतनी

अधिक क्रि यथार्थ को जीने वाले इसे गले ही नही उतार पाते । औसतन जन-रुचि के इस परिणाम मे बुद्धिजीवी लोग सहभागी नहीं हो पाते ।

'गुनाहो का देवता' मे अकित प्रेम का आसमान बहुत पुराना है । मगर यह सब कुछ होने के बाद भी प्रेम के हल्के फुल्के चित्रो के साथ प्रेम और यौन-भावो का विस्तृत चित्रण बर्टी, पम्मी और चन्दर मे हमे मिलता है । चन्दर जितना भावुक है बर्टी उतना ही यथार्थवादी । बर्टी बार-बार मन को छूकर हमे उदास बना जाता है क्योकि उसने परिस्थितियो को जिया है और उन्हे जी कर वह जो भी कुछ कहता है वह शायद हम सब लोगो का सत्य है ।

"गुनाहो के देवता" मे सीमा से बाहर की रूमानियत है और "सूरज का सातवा घोडा" मे विश्वास से भी बाहर का यथार्थ । भारती ने इसे स्वीकारा भी है "दोनो कृतियो मे कालक्रम का अन्तर पडने के अलावा उन बिन्दुओ मे भी अन्तर आ गया है जिन पर खडे होकर मैंने समस्या का विश्लेषण किया है ।"[१]

"सूरज का सातवा घोडा" आकार मे छोटा होने के उपरान्त भी प्रयास मे विस्तृत और व्यजनात्मक है । आज के परिप्रेक्ष्य मे देखने पर इसके मूल्याकन के सिलसिले मे कई नई बातें उभर कर सामने आती हैं । निम्न मध्य-वर्गीय प्रेम के सहारे जीवन की सचाई का चित्रण उपन्यासकार ने करने का प्रयत्न किया है । निम्न-मध्य वर्ग की विवशताओ से पूर्ण इस कृति मे समाज, मानव-मूल्य, स्वतन्त्र दृष्टि और आत्मा की ईमानदारी के कई ऐसे उदाहरण प्रस्तुत हुए हैं जिन्हे एक साथ पाना बहुत कठिन है ।

निम्न मध्यवर्ग की बौद्धिक या भीतरी विवशता अपना पृथक् अस्तित्व रखती है । यह वर्ग विचारो से उलझा हुआ है, खयाली, मिथ्यादर्शी और कमजोर सपनो पर विश्वास जमाये हुए है । 'सूरज का सातवा घोडा' मे लेखक ने विभिन्न कोणो से एक समाज की कहानी और एक समाज के माध्यम से पूरे मध्यवर्ग की कहानी कही है । इसमे हम सभी के भीतर घर कर गई वह भीषण सचाई है जिसने हमे खोखला, नि सत्व और निराश बना दिया है, एक कोढ और दुर्गन्ध की तरह हमे मानसिक जडता से भर दिया है । छह घोडे तो इस दुर्गन्ध और जडता मे ही जकडे हुए हैं । भविष्य के घोडे के प्रति आस्थावान रहने के सिवा पाठक के पास कोई चारा नही है और इस स्थिति मे लेखक रूपी बाजीगर दर्शको को खूब उल्लू बना बना कर तालियां बजवाता है और भीतर ही भीतर हँसता है, उस हँसी को जो

१ 'सूरज का सातवा घोडा,' प्रथम-स०, पृष्ठ ७

उसके लिए घिमकर महत्वहीन हो गई है। इसीलिये यह चित्र "प्रीतिकर और सुखद नही है, क्योकि उस समाज का जीवन वैसा नही है और भारती ने चित्र को यथाशक्य सच्चा उतारना चाहा है।"[1]

प्रीतिकर और सुखद चित्र है चन्दर और सुधा का, क्योकि वह शायद सत्य न होकर एक वचन है। गेसू शायरी मे ही उलझ कर रह जाती है, बिनती को भाग्य की ठोकर फूलो की ढेरी पर गिरा देती है और सुधा की ठोकर उसे बरबाद करके ही चुप होती है—यह सब शायद सत्य से कुछ दूर है, सत्य भी हो सकता है मगर अपवाद रूप मे ही।

दोनो उपन्यासो मे प्रेम की गुत्थिया बहुत उलझी हुई हैं और इन गुत्थियो को सुलझाने मे ही बेचारे चन्दर और माणिक ढलकर चुक गये हैं और बूढी आखो से उजाड बस्ती मे चलते हुए हवाओ के पुरनमी झक्कडो को देखते रहते हैं। सत्य और कीचड मे फसे सूरज के छह घोडे ही हैं, सातवें घोडे ने अभी इस सब को देखा नही है, देखने के बाद उसकी क्या स्थिति होगी, कल्पना से बाहर की बात है।

'सूरज का सातवा घोडा' मे प्रगतिवादी स्तर बहुत अधिक स्पष्ट है, इतना स्पष्ट है कि भाषा शुद्ध अभिधापरक है। लाक्षणिक अथवा व्यजनापरक अर्थ यदि हम चाहे तो भी नही निकाल सकते। यह बात अलग है कि इसका 'टोटल इफेक्ट' अपने एक से अधिक अर्थ द्योतित करता है।

'सूरज का सातवा घोडा' कहानियो के तानो-बानो से रचा गया उपन्यास है जो अपनी पूरी सीमाओ मे सफल कहा जा सकता है। मगर चौथी कहानी (मालवा की युवरानी देवसेना की कहानी) का जोड ठीक से नही बैठ पाया हैं। कपडे मे लगाए गये पैबन्द की भाति इसका जोड स्पष्ट प्रतीत होता है और इस कहानी मे माणिक मे छिपा भारती, जो स्वभाव से रोमेन्टिक है भेष बदलकर बैठा है।

भारती बडे चालबाज लेखक हैं, उन्होने बडी सफलता से अपने आप को माणिक से अलग किया है, देखिए: 'अन्त मे मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि इस लघु-उपन्यास की विषय-वस्तु मे जो भी भलाई-बुराई हो उसका जिम्मा मुझ पर नही, माणिक मुल्ला पर ही है। मैंने सिर्फ अपने ढग से यह कथा आपके सामने प्रस्तुत कर दी है।' अपना सारा जिम्मा भारती माणिक के सिर पर मढ़ कर अलग हो जाते हैं।

सातवी कहानी मे भारती ने अपने पाठको को बुद्धू बनाकर गुमराह करने का प्रयत्न किया है। सातवें घोडे की कल्पना इस कहानी से पूरी उभर कर सामने

---

१. 'अज्ञेय' द्वारा लिखित उपन्यास की भूमिका।

नही आती, ऐसी स्थिति मे, समझ मे नही आता कि पाठक क्योकर सातवें घोडे के प्रति आस्थावान हो ? भारती किसी भी प्रसग को अपने अनुकूल बनाने की, उसे मनचाहे मोड देने की और उसे पारदर्शी बनाने की चेष्टा करते हैं। इस सब को देखकर हमे इतना मानना होता है कि भाषा पर भारती का पूरा अधिकार है, कही हिन्दोल-से उतार-चढाव हैं तो कही बादलो की बेवजनी उडती हुई छायाओ मे नितान्त मर्मस्पर्शी प्रणय-ध्वनि, तो कही अद्भुत निष्कर्षों से आश्चर्य मे डालकर चौंका देने की सामर्थ्य है।

शिल्प की दृष्टि से भारती का पहला उपन्यास जितना साधारण है दूसरा उतना ही कलात्मक। लेखक कथ्य और शिल्प दोनो ही स्थितियो मे सजग है। अनुकूल वातावरण मे ढाल कर उसे शिल्प मे ढाल लेने की शक्ति भारती मे कमाल ही की है। कहानी मे से कहानी निकालना और एक कहानी का अपने आप मे हजार-हजार कहानिया समेटे चलना कोई कम बात है ? और इस सब के बाद भी अपने पाठको को यथार्थ के नाम पर छलना और झूठी आस्था उत्पन्न करने की शक्ति भारती के शिल्प मे है। मैं अपनी ईमानदारी की स्पष्टता के लिए भारती ही की ये पक्तिया रखता हूँ :

'आपको सच बताऊ कि यह विश्वास नामक चीज तो बिल्कुल छुतहा रोग है, उडकर लगता है ..... ' लेखक अपने झूठ पर इस गहराई से विश्वास करता है कि पाठक को यह विश्वास उडकर लगता है। ' 'पर मैंने कहा न कि मेरी दिक्कत यह है कि मैं खुद अपने झूठ को पकड लेता हूँ, फिर असमजस मे पड जाता हूँ कि इस पर विश्वास करके मैं और किसी को बाद मे, पहले तो अपने को ही छलूगा, अपने साथ कपट करूगा ''। एक छोटी सी बात लें। मैंने एक कहानी लिखी 'गुलकी बन्नो', आपने 'निकष' का पहला अक देखा था, उसी मे थी। यथार्थ और सामाजिक यथार्थ पर जान देने वाले आलोचको ने उस पर काफी शोर मचाया ... तारीफो के पुल बाधे। पर मैं सोचने लगा कि सामान्य जीवन मे मैंने जिस गुलकी को देखा था ...इस कहानी की गुलकी वही है क्या ? ईमान की बात है—नही। फिर इस कहानी की गुलकी कहाँ से आई ? यथार्थ मे तो नही थी ?''[1]

स्पष्ट है कि भारती झूठ बोलते हैं, झूठ को सत्य मे बदल देते हैं पर हम मान क्यो लेते हैं ? इसका एक मात्र उत्तर है लेखक की कुशलता, पच्चीकारी और उसका शिल्प। यही शिल्प 'सूरज का सातवा घोडा' मे है, जहा कि वास्तविकता से हम अनभिज्ञ हैं और भारती हमे शिल्प के जाले मे झूठी छलागें लगवाते चले चलते हैं

---

१ 'ठेले पर हिमालय,' डा० धर्मवीर भारती, प्रथम स०, पृ० ५१

और यह झूठ ही अपनी वास्तविकता मे जिन्दा बन बैठता है। यही भारती की कला है जिसे करामात कहिये चाहे खुराफात। लेकिन हमे इतना तो मानना ही होता है कि भारती के उपन्यास नि सदेह सजे और कसे हुए हैं।

'गुनाहो का देवता,' और 'सूरज का सातवा घोड़ा' मे उतना ही अन्तर है जितना प्रतिमा और प्राण मे होता है। 'गुनाहो का देवता' स्वच्छन्दतावादी स्रष्टा भारती की कृति है और 'सूरज का सातवा घोडा' का लेखक व्यग्यकार है। स्रष्टा और व्यग्यकार मे अन्तर तो होता ही है, स्रष्टा को तो किसी भी वस्तु को जन्म देकर पालना-पोसना होता है जबकि व्यग्यकार किसी भी कमी को झट से दिखा कर कर्त्तव्य मुक्ति पा लेता है। इसीलिए तो 'गुनाहो का देवता' का लेखक हर चोट को सहन करता चला है और 'सूरज का सातवा घोडा' का लेखक जहर से बुझी व्यग्य की हँसी हँसता चला है।

कुल मिलाकर 'गुनाहो का देवता' चाहे अपने उद्देश्य मे सफल हो पर युग-परिप्रेक्ष्य मे अपना अधिक महत्व नही रखता और 'सूरज का सातवा घोडा' नि.सदेह अपने पूरे आयामो मे सफल होने के साथ शिल्प की दृष्टि से अद्वितीय प्रयोग है। और इस प्रयोग मे रोचकता भी कम नही है, हँसी भी कम नही है और रुदन तो सीमाहीन है।

आज के युग मे घोर और नग्न यथार्थवाद के नारे हर तरफ सुनाई पडते है, हर तरफ घुटन और सत्रास की बू फैली हुई है। मशीनी जिन्दगी मे साहित्य ढलता चला जा रहा है। ऐसे मे भी भारती को आस्थावान देख कर कुछ सतोष जरूर होना है। आज युग के साहित्य मे नूतन शिल्प-प्रयोगो का नारा बुलन्द है लेकिन उभर कर सामने वाले शिल्पगत प्रयोगो मे केवल शिल्प ही शिल्प रह गया है और कथ्य पीछे छूटता चला गया है। 'सूरज का सातवा घोडा' मे शिल्प और कथ्य का भारती ने उत्तम समन्वय किया है जो इस समय तक अपने क्षेत्र मे अनूठा है।

# धर्मवीर भारती के उपन्यासो में स्वप्न–मनोविज्ञान

भारती के दो उपन्यास हैं। 'गुनाहो का देवता' एव 'सूरज का सातवा घोडा' पहला उपन्यास जितना प्लेटोनिक है, दूसरा उतना ही यथार्थवादी। पहले उपन्यास मे स्वप्न प्लेटोनिकता के खण्डन के लिए आए हैं तो दूसरे उपन्यास मे यथार्थ को और तीखा वनाने के लिए।

भारती का पहला उपन्यास 'गुनाहो का देवता' है। इसमे केवल दो स्वप्न आये हैं। अब हम पहले स्वप्न का सदर्भ देख लें ताकि स्वप्न की व्याख्या मे कठिनाइयो का हल आसान हो जाये।

स्वप्न, उपन्यास का नायक चन्दर देखता है। चन्दर का सुधा के साथ भावात्मक प्रणय है। पम्मी एक ऐसी लडकी है, जो चन्दर को चाहती है। वह दुहाई तो आध्यात्मिक प्रेम की देती है पर इस आध्यात्मिकता के पीछे घोर वासना का ससार छिपा हुआ है। पम्मी चन्दर को मित्र बना लेती है, अब वे दोनो एक-दूसरे के और करीव आ जाते हैं। एक उदास साझ मे चन्दर पम्मी के यहा जाता है, चन्दर और पम्मी पिक्चर देखने जाते हैं, पिक्चर मे उनका मन नही लगता, वे उठकर मैकफर्सन झील पर घूमने के लिए आ जाते हैं। यहा दोनो मे काफी देर खुलकर बातें होती हैं। बातें वहुत देर तक प्यार और सैक्स पर ही मडराती रहती हैं, फिर वासना उभरने लगती है और इस वासना मे ही पम्मी और चन्दर दोनो डूब जाते हैं। फिर वे उठकर घर आ जाते हैं। भावात्मक प्रणयी चन्दर के मन मे पम्मी की वासना एक द्वन्द्व पैदा कर देती है। एक तरफ तो वह सुधा के निश्छल प्यार को पाना चाहता है और दूसरी तरफ वह पम्मी की शारीरिकता पर मुग्ध भी हो जाता है। अब वह क्या करे ? इसी द्वन्द्व मे चन्दर को बहुत देर तक नीद नही आई, और जब नीद आई तो अपने साथ स्वप्न लेकर आई।

"बार बार झपकी आई। लगा कि खिडकी के बाहर के सुनसान अँधेरे मे से अजब-सी आवाजें आती हैं और नागिन वनकर उसकी सासो मे लिपट जाती हैं। वह परेशान हो उठता है, इतने मे फिर कही से कोई मीठी सतरगी सगीत की लहर आती है और उसे सचेत और सजग कर जाती हैं। एक बार उसने देखा कि सुधा और गेसू कही चली जा रही हैं। उसने गेसू को कभी नही देखा था लेकिन उसने सपने मे गेसू को पहचान लिया। लेकिन गेसू तो पम्मी की तरह गाउन पहने हुए थी। फिर देखा

विनती रो रही है और इतना विलख-विलख कर रो रही है कि तवीयत घवडा जाए। घर मे कोई नही है। चन्दर समझ नही पाता कि वह क्या करे? अकेले घर मे एक अपरिचित लडकी से वोलने का साहस भी तो नही होता उसका। किसी तरह हिम्मत करके वह समीप पहुँचा तो देखा अरे, यह तो सुधा है। सुधा लुटी हुई-सी मालूम पडती है। वह वहुत हिम्मत करके सुधा के पास बैठ गया। उसने सोचा सुधा को आश्वासन दे लेकिन उसके हाथो पर जाने कैसी सुकुमार जजीरें कसी हुई हैं। उसके मुँह पर किसी की सासो का भार है। वह निश्चेष्ट है। उसका मन अकुला उठा। वह चौंक कर जाग गया तो देखा वह पसीने से तर है।"[1]

इस स्वप्न मे चन्दर की अतृप्त इच्छाएँ प्रकट हुई हैं, और चन्दर के वर्त्तमान का द्वन्द्व भी प्रकट हुआ है, यह हमे इस स्वप्न के विश्लेषण से ज्ञात होगा।

युग के मतानुसार 'स्वप्न भूत की दमित इच्छाओ को व्यक्त करते हैं, पर वे वर्तमान सघर्ष की अभिव्यक्ति भी कर सकते हैं और भविष्य की ओर इशारा भी कर सकते हैं।"[2]

इस स्वप्न मे भी चन्दर के वर्तमान सघर्ष ने अभिव्यक्ति पाई है और उसके प्रणयी जीवन का भविष्य भी घुँधले रूप मे उभर कर आया है। इस स्वप्न के विश्लेषण के लिए स्वप्न को कुछ खडो मे विभक्त कर लें तो स्वप्न को समझने मे अधिक सुविधा रहेगी।

| | | |
|---|---|---|
| १ सुनसान अन्धेरा | — | चन्दर को डावाडोल स्थिति |
| २ आवाजो का नागिन वनकर उसकी सासो से लिपट जाना। | — | पम्मी से भय, वह नही चाहता कि पम्मी उसे अपनी वासना मे वाघ ले। |
| ३ मीठी सतरगी सगीत की लहर। | — | उसकी भावात्मक प्रेयसी सुधा। |
| ४ उसके द्वारा स्वप्न मे गेसू को पहचान लेना | — | गेसू को पहले उसने कभी नही देखा था, लेकिन सुधा हर समय उसके सामने गेसू की वात करती रहती थी, यहाँ उसका अनुमान प्रकट हुआ है कि सभवत यह गेसू ही होगी। |

१. गुनाहो का देवता, घर्मवीर भारती, दसवा स०, पृष्ठ १२३

२ असामान्य मनोविज्ञान, हसराज भाटिया, चतुर्थ स०, पृष्ठ ३८२

| | | | |
|---|---|---|---|
| ५ | गेसू को गाउन पहने देखना | — | उसके मन मे सदेह है कि कही सुधा की मित्र गेसू भी पम्मी की तरह गाउन तो नही पहनती। और अगर पहनती है तो वह भी पम्मी की तरह वासना से भरी हुई है। |
| ६ | सुधा का रुदन | — | उसके मन का भय प्रकट हुआ है कि अगर सुधा को पम्मी वाली घटनाएँ ज्ञात हो गई तो सुधा के हृदय को चोट लगेगी। |
| ७ | सुकुमार जजीरें | — | अतृप्त इच्छाएँ, जो उसे अच्छी भी लगती हैं पर पूरी नही हो पाती (सुकुमार जजीरो से अन्धकारमय भविष्य की ध्वनि भी हो सकती है।) |
| ८ | उसके मुँह पर किसी की सासो का भार है | — | वह सुधा को चुप नही कर पाता, क्योकि उसे पम्मी की वासना घेरे हुए है। |
| ९ | उसके मन का अकुला उठना। | — | वह सुधा को छोड कर पम्मी को नही अपनाना चाहता। |

स्वप्न देखने के दूसरे दिन चन्दर सुधा से मिलता है और उसे वह स्वप्न सुना देता है और भर्रायी हुई आवाज मे सुधा से कहता है, "सुधा, तुम कभी हम पर विश्वास न हार बैठना तुम्हारा विश्वास अगर कभी हिला तो मैं किन अँधेरी गहराइयो मे डूब जाऊँगा यह कभी मैं नही सोच पाता।" इस प्रकार स्वप्न की व्याख्या से यह स्पष्ट हुआ कि चन्दर सुधा के स्नेह मे ही डूबा रहना चाहता है। यद्यपि पम्मी चन्दर को चाहती है, चन्दर भी पम्मी को चाहता है पर चन्दर का मन अवचेतन की गहराइयो की न जाने किन पर्तों मे पम्मी को अस्वीकार करता है, उससे भय खाता है, उससे घबराता है और उससे बचना चाहता है, और चाहता है मीठी सतरगी सगीत की लहर के समान सुधा के प्रणय मे खोये रहना। इस प्रकार इस स्वप्न से चन्दर के मन की भीतरी भावनाएँ प्रकट होती हैं।

उपन्यास के दूसरे स्वप्न का द्रष्टा भी चन्दर ही है। अब सुधा का विवाह हो गया है। अब वह किसी की पत्नी है, लेकिन चन्दर के प्रति उसके स्नेह मे कोई अन्तर नही आया है। सुधा के विवाहोपरान्त इधर चन्दर का सम्पर्क पम्मी से अधिक

वढता है। पम्मी के ससर्ग मे उसने पाया कि प्रेम और पवित्रता दो पृथक् वस्तुएँ हैं। जहा पवित्रता है वहा प्रेम हो ही नही सकता। पम्मी के भाई वर्टी (जिसे प्रणय की ठोकरो ने अर्द्ध-विक्षिप्त वना दिया है) ने उसका परिचय जीवन के यथार्थ से करवाया। वर्टी उससे कहता है कि अगर तुमने किसी से प्यार किया है और तुम चाहते हो कि वह लडकी जीवन भर तुम्हारी कृतज्ञ रहे तो तुम उसकी शादी करा देना। यह लडकियो के सैक्स जीवन का अन्तिम सत्य है। वर्टी की यह वात चन्दर के हृदय को चीर गई, क्योकि यही सव चन्दर के अतीत-जीवन का सत्य था। चन्दर वर्टी के पास से उठकर घर चला आता है। रात मे सोता है तो वार-वार चौंक उठता है, फिर वह एक स्वप्न देखता है।

'एक वहुत वडा कपूर का पहाड है। वहुत वडा। मुलायम कपूर की वडी-वडी चट्टानें और इतनी पवित्र खुशवू कि आदमी की आत्मा वेले का फूल वन जाए। वह और सुधा उन सौरभ की चट्टानो के वीच चढ रहे है। केवल वह है और सुधा ...........। सुधा सफेद वादलो की साडी पहने है और चन्दर किरणो की चादर लपेटे है। जहा-जहा चन्दर जाता है, कपूर की चट्टानो पर इन्द्रधनुष खिल जाते हैं और सुधा वादलो के आचल मे इन्द्रधनुष के फूल वटोरती चलती है।

सहसा एक चट्टान हिली और उसमे से एक भयकर प्रेत निकला। एक सफेद कंकाल—जिसके हाथ मे अपनी खोपडी और एक हाथ मे जलती मशाल और उस मुण्डहीन ककाल ने अपनी खोपडी हाथ मे लेकर चन्दर को दिखाई। खोपडी हसी और वोली—देखो जिन्दगी का अन्तिम सत्य यह है। यह, और उसने अपने हाथ की मशाल ऊची कर दी। यह कपूर का पहाड, यह वादलो की साडी, यह किरणो का परिधान, ये इन्द्रधनुप के फूल, यह सव झूठे हैं। यह मशाल जो अपने एक स्पर्श मे इस सव को पिघला देगी और उसने अपनी मशाल एक ऊचे शिखर से छुआ दी। वह शिखर धधक उठा। पिघली हुई आग की एक धार वरसाती नदी की तरह उमड कर वहने लगी।

'भागो सुधा'—चन्दर ने चीख कर कहा—'भागो'।

सुधा भागी—चन्दर भागा और वह पिघले हुए आग की महानदी लहराते अजगर की तरह उन्हे अपनी गुजलिका मे लपेटने के लिए चल पडी। शैतान हँस पडा 'हा। हा। हा। चन्दर ने देखा, सुधा शैतान की गोद मे थी।'[1]

यह स्वप्न हुआ। इसमे जो स्पष्ट है वह तो ठीक ही है, और जहा विपर्यास है वहां व्याख्या करनी होगी। अत ऐसे स्थान हमे इस स्वप्न से छाट लेने होगे

---

१. 'गुनाहो का देवता', धर्मवीर भारती, दसवा सस्करण, पृ० २३३।

जिनके अर्थ के लिए व्याख्या की आवश्यकता है। अब हम ऐसे स्थलो की, जिनमे कि विपर्यास है, व्याख्या कर लें।

| | | |
|---|---|---|
| सौरभ | — | प्रेम का प्रतीक है। |
| चट्टानें | — | कठिनाइयो की प्रतीक हैं। |
| बादलो की साडी किरणो की चादर | — | दोनो बादल और किरणो की तरह आपस मे हिलमिल कर जीना चाहते हैं। दोनो सुन्दर भी हैं; सुधा बादल की तरह श्याम-वर्णी है, चन्दर किरणो की तरह गौर-वर्णी है। |
| इन्द्रधनुष | — | सुधा का प्यार। |
| इन्द्रधनुष के फूल | — | और अधिक प्यार, जो फूल की तरह कोमल है। |
| भयकर प्रेत | — | भय का प्रतीक। |
| सफेद ककाल | — | मृत्यु का प्रतीक। |
| अपनी खोपडी | — | अपनी मृत्यु का प्रतीक। |
| जलती मशाल | — | कठिनाइयो से भरे जीवन का प्रतीक। |
| कपूर का पहाड, बादलो की साडी, किरणो का परिधान, इन्द्रधनुष के फूल सब का मिथ्या होना | — | चन्दर का प्रेम जीवन की कठोर वास्तविकताओ को सहन करने मे असमर्थ है। अत उसका सारा प्रेम कृत्रिम है, सत्य सिर्फ मृत्यु है। |
| भागना | — | मृत्यु का भय। |
| सुधा का शैतान की गोद मे होना | — | सुधा मृत्यु के निकट थी, प्रेम सुधा को मृत्यु से नही बचा पाया। अतिम सत्य मृत्यु है, प्रेम नही। |

इससे स्पष्ट हुआ कि चन्दर की आस्था धीरे-धीरे प्रेम के आदर्श से हटने लगी है। अब वह भावुक नही रह गया है, घोर बौद्धिक और जीवन का कठोर

विश्लेषणकर्त्ता बन गया है। इसलिए चन्दर आगे चलकर साफ कहता है कि सुधा भी अन्ततोगत्वा वही साधारण लडकी है जो कुंवारे जीवन मे पति और विवाहित जीवन मे प्रेमी की भूखी होती है, और जब सुधा आती है तो चन्दर उससे स्पष्ट कहता है : 'सुधा, इन सब बातो से फायदा नही है अब इस तरह की बाते करना और सुनना मैं भूल गया हूँ। कभी इस तरह की बाते करते अच्छा लगता था। अब तो किसी सुहागन के मुह से यह शोभा नही देता।'[1]

इस प्रकार यहा चन्दर के मन का द्वन्द्व स्पष्ट हुआ है। अब उसकी आस्था प्रेम के रगीन अहसासो मे नही रह गई है, अब वह जीवन को पहचानने की चेष्टा करने लगा है कि जीवन क्या है ? और जीवन का सत्य क्या है ?

अब हम भारती के दूसरे उपन्यास—सूरज का सातवा घोडा—मे आये स्वप्नो पर विचार करें। 'सूरज का सातवा घोडा' ठोस यथार्थ की भूमि पर अकित एक नवीन-शिल्पी उपन्यास है। उपन्यास सात दोपहरो मे, बल्कि स्पष्ट कहे, सात कहानियो मे बँटा हुआ है और इन कहानियो के वक्ता हैं—माणिक मुल्ला। उपन्यास का पहला स्वप्न तीसरी कहानी की समाप्ति के बाद आया है। स्वप्न कहानी-श्रोताओ मे से एक ने (लेखक) देखा है। तीसरी कहानी मे मध्यवर्ग का यथार्थ स्पष्ट हुआ है, और यह यथार्थ इतना कडुआ है कि श्रोतागण इस यथार्थ को अन्त तक सुन सकने का साहस भी नही रख पाते और उठकर चले जाते हैं। स्वप्न की पृष्ठभूमि सक्षेप मे इस प्रकार है :

तीसरी कहानी मध्यवर्गीय युवक पात्र तन्ना की कहानी है जिसने जीवन मे कभी भी शान्ति नही पायी है। सौतेली मा की गालिया, पिता की मार, और परिवारो के आपसी झगडो के कारण जमुना से असफल प्रणय, कम उम्र मे परिवार का भार, इन सब ने तन्ना को बुरी तरह तोड-झझोड दिया है। परिवार का दायित्व उन पर आ जाने से उन्हें कार्य मे और अधिक व्यस्त रहना पडता है। इधर जमुना की शादी भी किसी और के साथ हो जाती है। जमुना के पति का देहान्त हो जाता है, वह अपने एक नौकर रामधन को अपने घर मे रख लेती है। आर. एम एस की नौकरी मे तन्ना को बिल्कुल फुर्सत नही मिलती और फिर वे ठहरे बिल्कुल ईमानदार आदमी। आज के युग मे ईमानदारी को पूछता कौन ? बेचारे तन्ना इसी तरह अपने दायित्व मे उलझे जीवन को ढो रहे थे। बहुत दिन बीमार रहने के बाद एक दिन तन्ना वापस नौकरी पर गए तो बहुत डाट-डपट के बाद उन्हे वापस नौकरी पर रखा गया। बीमारी की कमज़ोरी तो थी ही, ऐन्जिन की पानी की बाल्टी उनसे टकरा गई, वे गिर

---

१ 'गुनाहो का देवता', धर्मवीर भारती, दसवा सस्करण, पृ० २३७।

पड़े और उनकी दोनो टागें कट गई । सक्षेप में यह तन्ना का जीवन था । इतने तीखे यथार्थ को श्रोतागण गले नही उतार सके । इस कहानी को सुनने के वाद श्रोताओ में से एक (लेखक) रात को स्वप्न देखता है :

'स्वर्ग का फाटक । रूप, रेखा, रग, आकार कुछ नही, जैसा अनुमान कर लें । जैसे अतियथार्थवादी कविताएँ-जिन का अर्थ कुछ नही, जैसा अनुमान कर लें । फाटक पर रामधन बाहर वैठा है । अन्दर जमुना श्वेतवसना, शान्त, गम्भीर उसकी विश्रृखल वासना, उसका वैधव्य पुरइन के पत्तो पर पडी ओस की तरह बिखर चुका है, वह वैसी ही है जैसी तन्ना को प्रथम वार मिली थी ।

बादलो मे एक टार्च जल उठती है । राह पर तन्ना चले आ रहे हैं । आगे आगे तन्ना कटे पावो से घिसटते हुए, पीछे पीछे उनकी दो कटी हुई टागें लडखडाती हुई चली आ रही हैं । टागो पर आर एम एस. के रजिस्टर लदे हैं ।

फाटक पर पाव रुक जाते हैं । फाटक खुल जाते हैं । तन्ना फाइल उठाकर अन्दर चले जाते हैं । दोनों पाव बाहर छट जाते हैं । बिस्तुइया की कटी हुई पूछ की तरह छटपटाते हैं ।

कोई वच्चा रो रहा है । वह तन्ना का वच्चा है । दवे हुए स्वर : यूनियन, आर एम आर एम. आर एस यूनियन । दोनों कटे हुए पाव वापस चल पडते हैं । धुए का रास्ता तार के पुल की तरह कापता है । दूर किसी स्टेशन से कोई डाक गाडी छूटती है ·· ···· ···· ।'[1]

प्रस्तुत स्वप्न मे तन्ना (जो कि मध्यवर्ग का प्रतिनिधि पात्र है) की आर्थिक एव सामाजिक स्थितिया अपने कटु रूप मे खुलकर प्रकट हुई हैं । तन्ना की सभी यथार्थ की स्थितिया ज्यो की त्यो स्वप्न के द्वारा स्पष्ट हुई हैं । स्वप्न का विश्लेषण इस प्रकार होगा .

अवर्णनीय प्रसन्नता है, लेकिन यह प्रसन्नता, यह स्वर्ग तन्ना के लिए अर्थहीन है । यहा तो रामधन जैसे दुराचारी लोग ही प्रसन्न रह सकते हैं तन्ना जैसे ईमानदार लोग नही । जमुना को अपने वैधव्य का भी दु.ख नही है, क्योकि वह तन्ना की भाति ईमानदारी के चक्कर में नही पडी है । वह तो वैधव्य के जीवन मे भी प्रसन्न है, यहा तक कि जमुना के पहले के जीवन में और वर्तमान के जीवन मे कोई अन्तर दिखाई नही देता, सिवाय इसके कि वह अब कुछ गभीर दिखने लगी है और इस गभीरता का कारण यह है कि, इसी के भीतर उसने अपनी वास्तविकता (वासना से भरा जीवन) छिपा रखी है । इस प्रसन्नता का कारण घोडे की नाल है, क्योकि

---

१ सूरज का सातवा घोडा, धर्मवीर भारती, स्टार पाकेट बुक्स, प्रथम सस्करण, पृष्ठ ६०-६१

इसी के कारण उसे रामवन के साथ एकान्त-लाभ होता था। इधर ईमानदारी के कारण तन्ना की स्थिति चिन्तनीय है--आर्थिक भी और सामाजिक भी। इसी ईमानदारी के कारण तन्ना अपने जीवन मे कभी प्रसन्न नही रह सके। पाव परिश्रम के प्रतीक हैं। तन्ना का परिश्रम अन्त तक निराश ही रह जाता है। डाक गाडी प्राणो का प्रतीक है। तन्ना के प्राण छूट जाते है। वे वेचारे कभी प्रसन्नता प्राप्त नही कर पाये और ईमानदारी मे अपनी उम्र गवा दी।

यह स्वप्न की व्याख्या हुई। यहा स्वप्न यथार्थ को और अधिक तीक्ष्ण बनाने के लिए आया है। यह स्वप्न पाठक की आखें खोल जाता है, उसका खण्डित वर्तमान के क्रूर जीवन से साक्षात्कार करवा देता है। यही इस स्वप्न की उपलब्धि है।

उपन्यास का दूसरा स्वप्न भी कहानी-श्रोताओ मे से ही एक ने (लेखक) देखा है। स्वप्न की पूर्व-पीठिका पहले द्रष्टव्य है. स्वप्न छठी कहानी सुनने के वाद आया है। छठी कहानी पाचवी कहानी से जुडी हुई है, और पाँचवी कहानी है 'काले वेट का चाकू'। कहानी की नायिका निम्न मध्यवर्ग की एक युवा लडकी सत्ती है। सत्ती सावुन वेचने का काम करती है। उसे माणिक से भावात्मक प्रेम है लेकिन अन्य लोगो की वासनाभरी दृष्टिया भी सत्ती पर मडराती रहती हैं। माणिक सत्ती को अपने घर मे रख लेना चाहते हैं लेकिन माणिक के भाई-भाभी इस वात मे माणिक का साथ नही देते। सत्ती का पिता नशैल है, वह किसी से पैसे लेकर सत्ती का विवाह उसके साथ कर देने का वायदा कर लेता है। लेकिन सत्ती महेसर दलाल के साथ विवाह करने के लिए प्रसन्न नही होती। उसे इतनी मार पडती है कि वह वेहोश हो जाती है। उसे गाडी मे डालकर कही और ले जाया जा रहा है। और इधर यह अफवाह है कि सत्ती की मृत्यु हो गई है। सत्ती की मृत्यु के समाचार से माणिक के कोमल हृदय को ठेस पहुचती है। अव माणिक का पढाई मे भी मन नही लगता। माणिक उदास रहने लगे है। एक दिन जव माणिक चायघर से निकलते है तो सामने एक भिखारी को देखते हैं। भिखारी सत्ती का पिता है और गाडी को खीचने वाली स्वय सत्ती है। जीवन के इतने क्रूर कोण को देखने के वाद भी माणिक प्रसन्न होते हैं कि चलो सत्ती जीवित तो है। अव माणिक ने आर एम. एस. मे तन्ना के रिक्त स्थान पर नौकरी कर ली है। इस कहानी के वाद रात को लेखक स्वप्न देखता है :

'चिमनी से निकलने वाले धुए की तरह एक सतरगा इन्द्रधनुप धीरे-धीरे उग रहा है। आकाश के वीचोवीच आकर वह इन्द्रधनुप टग गया है। एक जलता हुआ होठ, कापता हुआ--वायी ओर से इन्द्रधनुप की ओर खिसक रहा है।

एक जलता हुआ होठ, कापता हुआ-दायी ओर से इन्द्रधनुप की ओर खिसक रहा है।

दायी ओर माणिक का होठ, बायी ओर लीला का। खिसकते-खिसकते इन्द्र-धनुष के नजदीक आकर दोनो एक हो जाते हैं।

नीचे धरती पर महेसर दलाल एक गाडी खीचते हुए आते हैं। गाडी चमन ठाकुर की भीख मांगने वाली गाडी है। उसमे छोटे-छोटे बच्चे बैठे हैं। जमुना का बच्चा, तन्ना का बच्चा, सत्ती का बच्चा। चमन ठाकुर का कटा हुआ हाथ अन्धे अजगर की तरह आता है, बच्चे की गरदन मे लिपट जाता है, मरोडने लगता है। उनका गला घुटता है, इन्द्रधनुष के दोनो ओर प्यासे होठ और नजदीक आ जाते हैं।

तन्ना के दोनो कटे हुए पैर राक्षसो की तरह झूमते हुए आते हैं। उनमे नयी लोहे की कीलें जडी हैं। बच्चे उनसे कुचल जाते हैं। हरी घास—दूर-दूर तक बरसात मे साइकलो से कुचली हुई वीर बहुटिया फैली हैं। रक्त सूखकर गाढा, काला हो गया है। इन्द्रधनुष की छाया तमाम पहाड और मैदानो पर तिरछी होकर पडती है। माताए सिमकती हैं। जमुना, लिली, सत्ती।

दोनो होठ इन्द्रधनुष के और समीप खिसकने लगते हैं 'और समीप और समीप।

एक काला चाकू इन्द्रधनुष को रस्से की तरह काट देता है। दोनो होठ गोश्त के मुर्दा लोथडो की तरह गिर पडते हैं।

'चीलें ···· · ··चीलें ·· ·· ··चीलें ··· ··· ·······टिड्डियो की तरह अनगिनत चीलें।'[१]

यहा भी पूरे मध्यवर्ग का यथार्थ स्वप्न के माध्यम मे सजीव हुआ है। पहले हम स्वप्न मे आये प्रतीको को समझ लें, तो स्वप्न स्वत स्पष्ट हो जायगा।

| | | |
|---|---|---|
| चिमनी, धुआ | — | मध्यवर्ग। |
| सतरगा इन्द्रधनुष | — | प्रणय की भावनाएँ। |
| आकाश के बीचोबीच इन्द्रधनुष का टग जाना | — | आधारहीन प्रणय (जो सफल नही हो पाया) |
| जलते और कापते हुए होठो का इन्द्रधनुप की ओर खिसकना | — | दोनो प्रेमी एव प्रेयसी (माणिक एव लीला) अतृप्त ही रह जाते हैं। तृप्ति के लिए उनमे भटकाव है। |

१ 'सूरज का सातवा घोडा', प्रथम सस्करण, पृ० १०६–७।

| | | |
|---|---|---|
| भीख मागने वाले की गाडी मे जमुना, तन्ना एव सत्ती के बच्चे | — | जमुना, तन्ना एव सत्ती मध्यवर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं—इनके बच्चे भविष्यहीन हैं। तात्पर्य – सभी मध्यवर्ग के बच्चे भविष्यहीन हैं। |
| चमन ठाकुर | — | क्रूर लोगो का प्रतीक है, जो अत्याचार फैलाते हैं। |
| लोहे की नालें जडे तन्ना के पैर | — | तन्ना की अचेतन की इच्छा स्पष्ट हुई है कि वह भी रामधन जैसा जीवन बिता पाता। |
| कुचली हुई वीर बहुटियाँ | — | कुचला हुआ मध्यवग। |
| इन्द्रधनुष की तिरछी छाया | — | मध्यवर्ग मे प्यार किसी को भी सही अर्थों मे नही प्राप्त होता, और जो मिलता है वह भी मध्यवर्ग के लिये उपयोगी नही। |
| काला चाकू | — | समाज की परम्पराएँ एव रूढिया, जो इच्छाओ की तृप्ति मे बाधक हैं। |
| चीलें, टिड्डिया | — | छीना हुआ भविष्य (छीनना ही चीलो और टिड्डियो का धर्म है—मध्यवर्ग से भी उसका परिश्रम, प्रणय और भविष्य छीन लिया जाता है।) |

इस प्रकार यह स्वप्न भी मध्यवर्ग की कठोर नग्नता का विश्लेषण करता है। यहा भी पूरे मध्यवर्ग का यथार्थ कटु रूप मे स्पष्ट होता है। यही मध्यवर्ग के आन्तरिक मन का विश्लेषण है।

स्वप्न सत्य के परिचायक होते है, वर्तमान की समस्याओ से जुडे होते है, भविष्य की सूचना देते हैं, मानसिक होते है। चारो बातें प्रस्तुत सदर्भ मे सच लगती है।

कटु वर्तमान का ज्ञान और भविष्य की सूचना हमे स्वप्नो से मिलती है ताकि हम सजग रहकर अपने भविष्य को सुधार सकें। भारती की दृष्टि मे यही स्वप्नो का महत्व है और यही स्वप्नो की उपादेयता है।

# राधा का स्वरूप : रंग धर्मवीर भारती के

साहित्य मे राधा' प्रारम्भ से ही प्रेम के प्रतीक रूप मे आई है। रावा और कृष्ण अभिन्न हैं, इन दोनो मे वही सम्बन्ध है जो पुष्प और उसकी गन्ध मे, अग्नि और उसकी ऊष्मा मे, पानी और उसकी तरलता मे, चन्दन और उसकी शीतलता मे होता है।

राधा प्रणय की मूर्त्ति तो ही है इसके अतिरिक्त वह कृष्ण की आराधिका, वान्ववी और मित्र भी है। उसमे दु ख का साहिल, सुख का समुन्दर, उमडते हुए जजवातो का तूफान, टकराती हुई भावनाओ का दरिया, लहराती हुई प्यास और उमडते हुए दर्द के ज्वालामुखी—सभी कुछ देखा जा सकता है।

साहित्य मे राधा प्रेरक शक्ति के रूप मे रही है और शृ गार रस तथा सिद्धावस्था के कवियो के लिए चिरन्तन सौन्दर्य-सुपमा और विला-कल्पना की प्रेरक रही है

गाथा सप्तशती से प्रारम्भ होकर सूरसागर तक राधा का जो व्यक्तित्व निखरा है उसके सामान्य विन्दु इस प्रकार हैं वह अपूर्व सुन्दरी, तन्वगी, प्रगल्भा काम-विदग्धा, विलासिनी, विरह-व्याकुला और विशुद्ध प्रेम की प्रतिमूर्त्ति है।

अब हम 'कनुप्रिया' के सदर्भ मे राधा को देखें। 'कनुप्रिया' अटारह भाव-गीतो का सकलन है, जिसमे पूर्वराग से लेकर प्रणय, भय, विरह और इतिहास का अकन है। 'कनुप्रिया' शिल्प की दृष्टि से नवीन छदी है, पर गीति-काव्य के सभी गुण इसमे सहजता से उपलब्ध हैं। 'कनुप्रिया' की राधा न तो विद्यापति की राधा की तरह अज्ञात यौवना ही है, न सूर की राधा की तरह वहानेबाज है और न नददास की राधा की तरह अतिरिक्त वाचाल ही है, न देव और बिहारी की राधा की तरह कामुक है और न हरिऔध की राधा की तरह लोक-सेविका ही है। इस राधा मे कृष्ण के प्रति सहज स्नेह है, ठीक वैसे ही जैसे पृथ्वी अपनी धुरी पर सहजता से घूमती है। इसीलिए लेखक ने कहा है, 'वह क्या करे जिसने अपने सहज मन से जीवन जिया है, तन्मयता के क्षणो मे डूबकर सार्थकता पाई है, और जो अब उद्घोषित महानताओ से अभिभूत और आतकित नही होता वल्कि आग्रह करता है कि वह इसी सहज की कसौटी पर समस्त को कसेगा।

ऐसा ही आग्रह है कनुप्रिया का।"[1]

'कनुप्रिया' भावो के सहज उद्रेक में डूबी हुई है। कृष्ण से राधा का पहला साक्षात्कार अज्ञात वन-देवता के रूप मे होता है। कृष्ण राधा के रूप मे इतने बंधे हुए हैं कि पलक झपक जाय, यह भी उन्हे स्वीकार नही है। पलकें बार-बार झपक कर आखो को धोखा देती है। कृष्ण इस धोखे से सावधान हैं, वे निष्पलक, अडिग, मूर्त्ति की भाति ध्यान-मग्न खडे हुए राधा को एकटक देख रहे हैं, और राधा है कि उन्हे अज्ञात वन-देवता समझ बैठी है।

'मैने कोई अज्ञात वनदेवता समझ
कितनी बार तुम्हे प्रणाम कर सिर झुकाया'[2]

पर निश्छल राधा को यह क्या पता कि जीवन के महान कार्य अनजाने मे ही होते हैं। उसने ऐसा कब सोचा था कि अनजाने किया गया यह प्रणाम ही उसके इतिहास की नीव बन जाएगा ? धीरे धीरे यही मित्रता प्रणय मे परिवर्तित हो जाती है, और राधा स्वय कृष्ण की आराधना करने लगती है। राधा का शाब्दिक अर्थ भी यही है—आराधना करने वाली।

कृष्ण मे राधा का मन पूर्णतया घुल कर एकाकार हो गया है। कृष्ण से मिलकर पृथक् होना उसे नही रुचता।

"और जब वापस नही आना चाहती
तब मुझे अ शतः ग्रहण कर
सम्पूर्ण बनाकर लौटा देते हो।"[3]

प्रणय का यह सम्पूर्ण भी अपने आप मे कितना अधूरा होता है। प्रणय के इन क्षणो की सीढिया कभी पूरी नही होती और न इन क्षणो को शब्दो की हथकडियो मे बन्दी बनाकर रखा जा सकता है। सयोग का यह क्षण तो उस रबर की तरह होता है जिसमे खीचे जाने पर बढ़ने की पर्याप्त क्षमता होती है।

राधा जब कृष्ण के निकट होती है तो जैसे उसके अहसासों पर पहरा लगा दिया जाता है। वह पत्थर हो जाती है, चेतनता जाने कहा तिरोहित हो जाती है। कृष्ण जब उसके पावो मे स्वय के हाथो से महावर लगाते हैं तो राधा के साथ यही होता है। वह अपने पाव समेट लेती है, मुंह फिराकर बैठ जाती है। सयोग अपने

---

१. कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण, पृ० ६
२. वही पृ० ७
३. वही पृ० ११

आप मे भले ही सुखद स्थिति नही है, पर वियोग मे सयोग का स्मरण सुखद होता ही है।

"पर शाम को जब घर आती हूँ तो
निभृत एकान्त मे दीपक के मद आलोक मे
अपने उन्ही चरणो को
अपलक निहारती हूँ
बावली सी उन्हे बार बार प्यार करती हूँ
जल्दी जल्दी मे अधबनी उन महावर की रेखाओ को
चारो ओर देखकर धीमे-से
चूम लेती हूँ"[१]

इन पक्तियो मे राधा का भोलापन टपकता है, पर भोलेपन से भी अधिक ध्वनित बात है कृष्ण के प्रति उसके मन का पारदर्शी लगाव। महावर की अधबनी रेखाओ को बार बार चूमने का कारण न तो पावो की सुन्दरता है और न महावर गन्ध। कारण है इन पावो को कृष्ण के हाथो का स्पर्श मिला है, यह सब अनजाने मे ही होता है क्योंकि इसकी मूलवृत्ति सशय या जिज्ञासा नही, भावाकुल तन्मयता है। प्रेम मे भोलेपन को एक गुण माना गया है। सूर और नददास की राधा मे भोलापन तो है पर चचलता उमसे भी अधिक है। नन्ददास की राधा वाचाल है। वह ईश्वर को निर्गुण स्वीकार नही करती, वह तो सगुण ईश्वर कृष्ण मे ही आस्था रखती है।

"जो हरि के नही कर्म कर्म बन्धन क्यो आवै
तो निर्गुन है वस्तुमात्र परमान बतावै"

वे ज्ञानी उद्धव तक को तर्कों से परास्त करने की क्षमता रखती है। भारती की राधा तार्किक नही है। उसे तो अपने अनगढ, अनसवरे बावलेपन पर ही गर्व है। कृष्ण के द्वारा मर्दित आमबौर का अर्थ वह नही समझ पाती, तो क्या करे ?

"तुम्हे तो मालूम है
कि मै वही बावली लडकी हूँ न
जो पानी भरने जाती हूँ
तो भरे हुए घडे मे
अपनी चचल आखो की छाया देखकर
उन्हे कुलेल करती हुई चटुल मछलिया समझ कर
बार बार सारा पानी ढलका देती है"[२]

---

१ कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण, पृ० १८
२ वही, पृष्ठ २२-२३

उसे तो यहा तक नही मालूम कि कृष्ण उसके क्या है ? बार बार उसकी सखियो ने स्नेह से, बार बार उसके गुरुजनो ने क्रोव से, बार बार उसके मन ने जिज्ञासा से पूछा है कि कृष्ण तुम्हारे क्या हैं ? लेकिन वह क्या उत्तर दे, वह स्वय भी तो नही जानती कि इस स्नेह को वह क्या कहे। कृष्ण उसके लिए क्या नही है ? मित्र, सहोदर, वन्धु, सहचर, शिशु, दिव्य, आराध्य। इन सब गहराइयो को वह किस सम्बन्ध विशेष से नापे ? वह तो बस इतना जानती है कि उसके सारे सम्बन्ध एकमात्र कृष्ण मे सिमटे हुए हैं। जब मन मे स्नेह होता है तो दो बडे बड़े दरवाजो को छोटी सी चटकनी मिलाकर एक बना देती है। यही राधा और कृष्ण का स्नेह है। राधा निष्काम आत्मसमर्पण करती है। उसका रोम रोम, कण कण, पोर पोर, रन्ध्र रन्ध्र कृष्णार्पित है। वह लोक की मर्यादाओ का उल्लघन करके भी कृष्ण की इच्छाओ को पूरा करना चाहती है, उसकी दृष्टि मे समर्पण से बडा और कोई सुख नही है। इसीलिए वह कहती है :

"तुम्हे मेरी जरूरत थी न, लो मै सब छोडकर आ गई हूँ
ताकि कोई यह न कहे
कि तुम्हारी अन्तरग केलिसखी
केवल तुम्हारे सावरे तन के नशीले सगीत की
लय बन कर रह गयी"[1]

लगभग ऐसी ही बात विद्यापति की राधा भी कहती है। विद्यापति की राधा भी अपना ध्येय कृष्ण को सुख देना मानती है।

'की मोरा जीवन, की मोरा जोवन, की मोर चतुरपने' अगर मैं कृष्ण को सुख नही दे पाऊ, तो इन सब का होना व्यर्थ है। सयोग और वियोग एक सिक्के के दो पहलू है, एक पन्ने के दो पृष्ठ है। जब सयोग ढल जाता है तो वियोग मुखरित हो उठता है। यह वियोग ही प्रेम का निकष है। अज्ञेय की पक्ति है—'दु ख मनुष्य को माजता है'। प्रेम तो उस विशाल अम्बर की तरह होता है जो गर्मी मे फैल जाता है, सर्दी मे सिकुड जाता है, वसन्त मे खिल जाता है और पावस मे रोने लगता है, पर नीलापन उसका लक्षण होता है। उसी तरह प्रेम मे भी कभी सुख है कभी दु ख, कभी सयोग और कभी वियोग, पर अम्बर के नीलेपन की तरह प्रिय का स्मरण ही प्रेम का लक्षण है। यह वियोग ही होता है जो प्रणयी धडकनो की गहराई को नापता है, वियोग मे ही नेत्र रूपी मछलियो को विना पानी जीवित रहना होता है। मन मे उठने वाली टीसें और सान्निध्य-स्मरण ही वियोग की निधि हैं।

---

१ कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण, पृ० ७९

इस वियोग की भारतीय साहित्य मे दस दशाए मानी गई हैं, और फारसी साहित्य मे नौ दशाए मानी गई हैं। 'कनुप्रिया' परम्परित काव्य नही है, अत इसमे वियोग की इन स्थितियो को ढूढना उचित नही है। फिर भी अगर हम जिज्ञासावश 'कनुप्रिया' की राधा मे विरह की इन स्थितियो को ढूढना चाहे तो अन्तिम दो तीन को छोडकर शेष सारी स्थितियो को पाने मे सफल हो सकेंगे। अब हम राधा को वियोग मे देखें। उस राधा और इस राधा मे कितना अन्तर है। सयोग मे समस्त ससार को अपने भीतर समेटकर रखने की आकाक्षा रखने वाली राधा वियोग मे क्या हो गई है। हृदय एक है मगर अहसासो मे कितनी पृथकता है। बेहद भोली राधा वियोग मे कैसी बौद्धिक बनने के लिए बाध्य हो गई है। अनुभव कहीं न कही उम्र के साथ जुडे होते है। सदर्भ मनुष्य को कितना बदल देता है। पहले सूर की विरहिणी राधा का चित्र देखिये। वह विरह मे मार्ग भूल जाती है, प्रिय को ढूढती फिरती है और रुदन मे डूबी हुई है।

'रुदन करत वृषभानु कुमारी
बार बार सखियन उर लावति कहा गये गिरधारी
कबहूँ गिरति धरनि पर व्याकुल देखी दया ब्रजनारी'[1]
अथवा
"सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु
अब वह मूरत भई सावरी"

विरह की अग्नि मे झुलस कर गौरवर्णी राधा सावरी बन गई है। विरह मे परेशान होकर विद्यापति की राधा तो कृष्ण को कटु उपालभ तक देती है कि मैं समुद्र में डूबकर प्राण त्याग दूगी और अगले जन्म मे कृष्ण बनूगी, इसी प्रकार जब कृष्ण भी राधा के रूप मे जन्म ग्रहण करेंगे तब तो समझेंगे कि विरह क्या होता है ?

"सायर" तजब परान
आन जनमे होयब कान
कानु होयब जब राधा
तब जानक विरहक बाधा"[2]

इनसे अलग भारती की विरहिणी राधा मे न तो ऐसा उन्माद है, न ऐसी जडता है और न ऐसा कटु उपालभ ही है। वह तो कृष्ण के बिना स्वय को निरर्थक महसूस करती है।

---

१ हिन्दी साहित्य मे राधा, प्रथम सस्करण, पृ० २९७
२. महाकवि विद्यापति : स्थापना और विवेचन, प्रथम सस्करण, पृ० १७०

"मन्त्र-पढ़े वाण-से छूट गये तुम तो कनु
शेप रही मैं केवल
कांपती प्रत्यचा सी"[1]

विना वाण के प्रत्यचा का कोई महत्व नही होता। यहा रावा के विरह को सर्वथा एक नयी दृष्टि और नया परिप्रेक्ष्य मिला है। इसीलिए राधा अब प्रश्न करती है

"सुनो कनु सुनो
क्या मैं सिर्फ एक सेतु थी तुम्हारे लिए
लीलाभूमि और युद्ध क्षेत्र के
अलध्य अन्तराल मे"[2]

विरह कैसे प्रश्नो को जन्म देता है। इसीलिए पहले ही कवि ने यह कहना उचित समझा है कि "ऐसे भी क्षण होते हैं जब हमे लगता है कि यह सव जो वाहर का उद्वेग है—महत्व उसका नही है—महत्व उसका है जो हमारे अन्दर साक्षात्कृत होता है—चरम तन्मयता का क्षण जो एक स्तर पर सारे वाह्य इतिहास की प्रक्रिया से ज्यादा मूल्यवान सिद्ध हुआ है, जो क्षण हमे सीपी की तरह खोल गया है—इस तरह कि समस्त वाह्य—अतीत, वर्तमान और भविष्य—सिमटकर उसी क्षण मे पुंजीभूत हो गया है और हम हम नही रहे।"[3]

इसीलिए विरह मे कृष्ण के विभिन्न रूप एक-एक कर रावा के मन मे उभरने लगते हैं। राधा कृष्ण से पूछना चाहती हे कि तुमने अर्जुन को तो शव्दो से समझा दिया, पर मुझे कैसे समझाओगे ? मेरे लिए तो शव्द अर्थहीन हैं। विरह मे रावा वही सव कुछ करती है जो वह सयोग मे करती थी। वह अव भी उसी आम्र-वृक्ष के नीचे रोज जाती है पर सार्थकता पहले थी, अव नही है। अव तो इसी आम्र-वृक्ष के नीचे से कृष्ण की अठारह अक्षौहिणी सेनाएं युद्ध के लिए गुजरेंगी। लेकिन विरह मे भी राधा निराश नही है, उसके हृदय को विश्वास है कि अठारह अक्षौहिणी सेनाओ के विनाश के वाद निरीह, एकाकी और आकुल कृष्ण किसी भूले हुए आचल की छाया मे विश्राम के लिए लौटेंगे तो उन्हे अपने वक्ष मे शिशु-सा लपेट लेगी।

सूर की राधा के लिए श्री नददुलारे वाजपेयी ने कहा है कि 'कम से कम यह तो कोई नही कह सकता कि सूरदास जी के काव्य मे चित्रित रावा और कृष्ण

---

१. कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण पृ० ५२
२. कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण, पृ० ५४
३ कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण, पृष्ठ ५

का प्रेम अतिरिक्त भावात्मक उद्रेक या उवाल का द्योतक है अथवा उसमे भि शुक्त कामुकता या दमित वासना के लक्षण है ।''[1]

इसके विपरीत भारती की राधा मे अतिरिक्त भावात्मक उद्रेक है, और इसी उद्रेक पर भारती की राधा को गर्व है । हा, उसमे कामुकता या दमित वासना के लक्षण नही है । कृष्ण रूपी सागर में मिलने के लिए वह उमडती हुई गतिशील नदी के समान है । नदी इतना लम्बा रास्ता तय करके समुद्र से जाकर मिलती है, लेकिन उसे रास्ते की लम्बाई अखरती नही क्योकि अन्तत यही रास्ता उसे अपने प्रिय समुद्र से मिला देता है । राधा को भी प्रणय के कटीले रास्तो के प्रति कोई शिकायत नहीं है, वह तो अपने इतिहास को कृष्ण से पृथक् नही रखना चाहती ।

इस वार कृष्ण का इतिहास राधा के इतिहास से भिन्न रहा है । राधा की अनुपस्थिति ने भी कृष्ण को अपने कर्म से डिगाया नही है । लेकिन राधा कृष्ण के विरह मे पेड से टूटे हुए पत्ते की भाति अकेली रह गई है । वह चाहती है कि कृष्ण के किसी भी क्षण का इतिहास उसके किसी भी क्षण के इतिहास से पृथक् न रहे ।

"जन्मान्तरों की अनन्त पगडण्डी के
कठिनतम मोड पर खडी होकर
मैं अब भी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ
कि इस वार इतिहास वनाते समय
तुम अकेले न छूट जाओ"

अथवा

"मेरी वेणी मे अग्निपुष्प गूथने वाली
तुम्हारी उगलिया
अब इतिहास मे अर्थ क्यो नही गूथती ।"[2]

कृष्ण के इतिहास को स्वय का इतिहास वनाने के लिए ही राधा अब भी कृष्ण की प्रतीक्षा कर रही हैं । निराश वह अब भी नही है, अब भी उसमे प्रणयी सासो का अतीत उमड रहा है । अगरवत्ती जल जाती है मगर अपने पीछे सुगन्ध छोड जाती है, कपूर जल जाता है पर वातावरण को शुद्ध वना ही जाता हैं । प्रेम चन्द्रमा की तरह नही होता जो विरह मे दिन व दिन क्षीण होता चला जाय । प्रेम उस विशाल सागर की तरह होता है जिससे चाहे जितना पानी भाप वन कर उड जाय, लेकिन जिसके पानी की गहराई मे कोई अन्तर नही आता । प्रेम उस पर्वत की तरह होता है जो प्रकृति के हर प्रकोप को सहता है लेकिन इस सब के वावजूद भी अडिग

---

१ हिन्दी साहित्य मे राधा, प्रथम सस्करण, पृष्ठ ३००

२ कनुप्रिया, द्वितीय सस्करण, पृष्ठ ७५–७६

और उन्नत-मस्तक खडा रहता है। अन्तरंग क्षणो की शतरगी तन्मयता के कारण ही राधा अब भी कृष्णमय है। कस्तूरी की महक उडती है पर कम नही होती, ऐसी ही गन्ध राधा के प्रणय की है जो उड-उडकर समस्त वातावरण पर छा रही है, पर कम नही हो रही है।

हर कवि की राधा ने कृष्ण को प्रेम किया है, कृष्ण मे खो जाना चाहा है, पर भारती की राधा के समर्पण मे नितान्त अनूठापन है, उसकी आन्तरिक गन्ध की तटहीन तरगो का अर्पण बेहद भावमय और मर्मस्पर्शी है। इस राधा ने स्वय खोकर कृष्ण को स्वीकारा है और अपने पाठको को उपहार दिया है निर्लिप्त आस्था का, अडिग विश्वास का।

# सहायक ग्रन्थो की सूची


## (क) धर्मवीर भारती की कृतियां

१ मुर्दों का गाव
२ आस्कर वाइल्ड की कहानिया
३ गुनाहो का देवता
४ प्रगतिवाद एक समीक्षा
५ सूरज का सातवा घोडा
६ ठण्डा लोहा
७ नदी प्यासी थी
८ चाद और टूटे हुए लोग
९ अन्धायुग
१०. सिद्ध साहित्य
११ कनुप्रिया
१२ देशान्तर ( अनूदित )
१३ सात गीत-वर्ष
१४. अन्धायुग

## (ख) आलोचनात्मक ग्रन्थ

| | |
|---|---|
| १५ हिन्दी उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन | डा० श्रीनारायण अग्निहोत्री |
| १६ हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा | डा० रामदरश मिश्र |
| १७ हिन्दी उपन्यास शिल्प · बदलते परिप्रेक्ष्य | डा० प्रेम भटनागर |
| १८ हिन्दी उपन्यास | डा० शिवनारायण श्रीवास्तव |
| १९ हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास | डा० सुरेश सिन्हा |
| २० प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासो की शिल्प-विधि का विकास | डा० सत्यपाल चुघ |
| २१. हिन्दी उपन्यास मे नारी चित्रण | डा० बिन्दु अग्रवाल |
| २२ हिन्दी के दस सर्वश्रेष्ठ कथा-त्मक प्रयोग | अरविन्द गुर्टू |
| २३. हिन्दी उपन्यास साहित्य का उद्भव और विकास | डा० लक्ष्मीकान्त सिन्हा |
| २४. हिन्दी उपन्यासो की शिल्प-विधि का विकास | डा० प्रतापनारायण टडन |
| २५ आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य का विकास | डा० वेचन शर्मा |
| २६ हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास | डा० कमल कुमारी जौहरी |

| | | |
|---|---|---|
| २७ | आधुनिक कथा-साहित्य | गगाप्रसाद पाण्डेय |
| २८. | हिन्दी उपन्यासो मे वर्ग-भावना | डा० प्रतापनारायण टडन |
| २९. | हिन्दी उपन्यास विकास और नैतिकता | सुखदेव शुक्ल |
| ३०. | हिन्दी-साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य | 'अज्ञेय' |
| ३१. | आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य और मनोविज्ञान | डा० देवराज उपाध्याय |
| ३२ | हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन | डा० गणेशन |
| ३३. | दिशाओ का परिवेश | डा० ललित शुक्ल |
| ३४. | हिन्दी उपन्यासो का मनोवैज्ञानिक मूल्याकन | ब्रह्मनारायण शर्मा |
| ३५. | फणीश्वरनाथ रेणु की उपन्यास-कला | कुसुम सोफट |
| ३६ | समाजशास्त्रीय सिद्धान्तो की विवेचना | बुद्धसेन चतुर्वेदी |
| ३७ | हिन्दी के आचलिक उपन्यास | प्रकाश वाजपेयी |
| ३८. | प्रतिक्रियाएं | डा० देवराज |
| ३९. | हिन्दी उपन्यास | डा० सुषमा धवन |
| ४०. | विवेक के रग | डा० देवीशकर अवस्थी |
| ४१. | हिन्दी गद्य साहित्य का इतिहास | डा० त्रिभुवन सिह |
| ४२. | आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तिया | डा० नामवरसिह |
| ४३. | आधुनिक साहित्य | आचार्य नददुलारे वाजपेयी |
| ४४. | नया साहित्य नये प्रश्न | आचार्य नददुलारे वाजपेयी |
| ४५ | हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा | डा० रामअवध द्विवेदी |
| ४६ | आस्था और सौन्दर्य | डा० रामविलास शर्मा |

## (ग) उपन्यास

| | |
|---|---|
| ५१. लज्जा | इलाचन्द्र जोशी |
| ५२ सन्यासी | ,, |
| ५३. पर्दे की रानी | ,, |
| ५४ प्रेत और छाया | ,, |
| ५५ जहाज का पछी | ,, |
| ५६ सितारो का खेल | उपेन्द्रनाथ अश्क |
| ५७ चादनी के खण्डहर | गिरवर गोपाल |
| ५८ सुनीता | जैनेन्द्र कुमार |
| ५९ त्याग-पत्र | ,, |
| ६० कल्याणी | ,, |
| ६१. डूबते मस्तूल | नरेश मेहता |
| ६२ परन्तु | डा० प्रभाकर माचवे |
| ६३ मैला आचल | फणीश्वरनाथ रेणु |
| ६४ परती परिकथा | ,, |
| ६५ चित्रलेखा | भगवतीचरण वर्मा |
| ६६ आखिरी दाव | भगवतीचरण वर्मा |
| ६७ अपने खिलौने | भगवतीचरण वर्मा |
| ६८. मुर्दों की टोली | डा० राघेय राघव |
| ६९. सारा आकाश | राजेन्द्र यादव |
| ७०. मछली मरी हुई | राजकमल चौधरी |
| ७१ चलता हुआ लावा | रमेश वक्षी |
| ७२ एरियल | अमृता प्रीतम |
| ७३. दिल्ली की गलिया | अमृता प्रीतम |
| ७४. अपने अपने अजनबी | 'अज्ञेय' |
| ७५. न आने वाला कल | मोहन राकेश |
| ७६ अन्धेरे वन्द कमरे | मोहन राकेश |

## (घ) पत्र पत्रिकाए

| | |
|---|---|
| १. परिषद् पत्रिका | पटना |
| २ सम्मेलन पत्रिका | प्रयाग |
| ३ नागरी प्रचारणी पत्रिका | वाराणसी |
| ४ अनुशीलन | इलाहावाद |
| ५ आलोचना | दिल्ली |
| ६ धर्मयुग | वम्वई |
| ७ साप्ताहिक हिंदुस्तान | दिल्ली |
| ८ मधुमती | उदयपुर |
| ९ साहित्य सदेश | आगरा |
| १० वातायन | वीकानेर |
| ११ लहर | अजमेर |